सोमसी

जनवरी '91

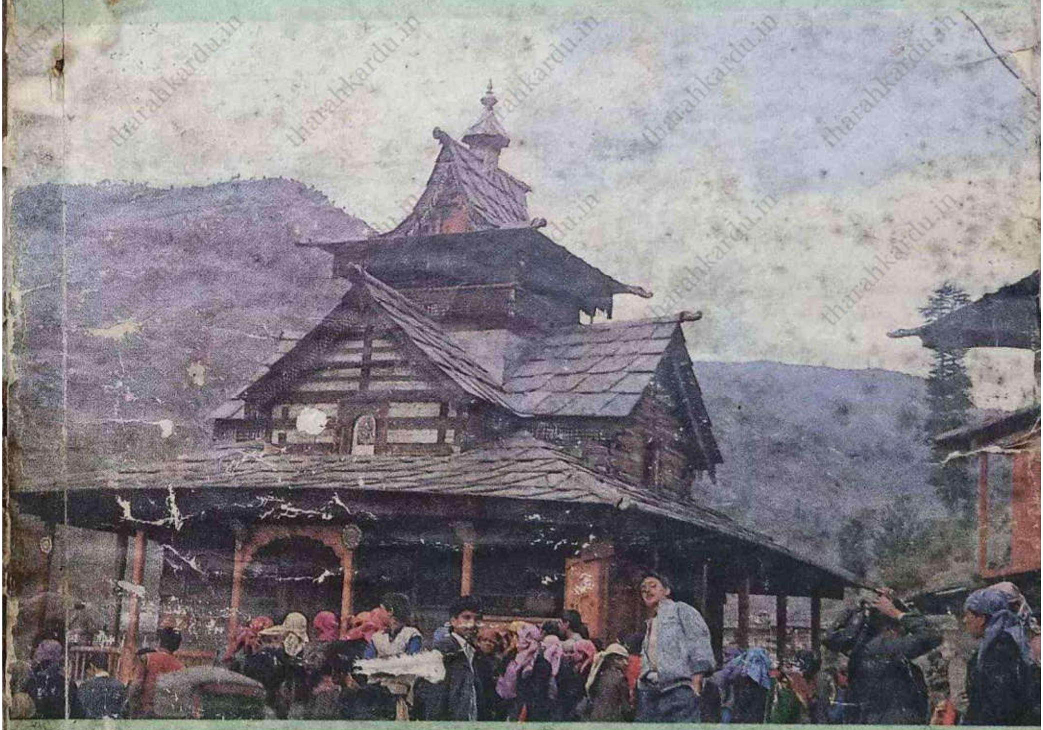

हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी

हिमाचल प्रदेश सरकार की अधिसूचना संख्या भाषा-ए-9-12/84-11 दिनांक 11 फरवरी, 1991 के अनुसार हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी की 5वीं सामान्य परिषद् का गठन अकादमी संविधान की धारा 7 के अन्तर्गत किया गया है। इसके निम्नलिखित सदस्य मनोनीत किए गए हैं :-

1.	श्री शान्ता कुमार माननीय मुख्यमन्त्री, हिमाचल प्रदेश	अध्यक्ष
2.	श्री राधारमण शास्त्री शिक्षामन्त्री (भाषा-संस्कृति) हिमाचल प्रदेश, शिमला-171 002	वरिष्ठ उपाध्यक्ष एवं सभापति कार्यकारी परिषद्
3.	सचिव (वित्त) हिमाचल प्रदेश सरकार	सदस्य
4.	सचिव (भाषा-संस्कृति), हि. प्र. सरकार	,,
5.	सचिव (शिक्षा), हि. प्र.	,,
6.	डॉ० इन्द्राणी चक्रवर्ती	,,
7.	निदेशक, शिक्षा विभाग, हि. प्र.	,,
8.	निदेशक, लोक सम्पर्क विभाग, हि. प्र.	,,
9.	निदेशक, भाषा एवं संस्कृति विभाग, हि. प्र.	,,
10.	संग्रहालयाध्यक्ष, राज्य संग्रहालय, शिमला	,,
11.	सचिव, हिमाचल कला, संस्कृति और भाषा अकादमी	सदस्य सचिव
12.	श्री भवानी दत्त शास्त्री	सदस्य
13.	श्री कृष्ण कुमार नूतन	,,
14.	श्री देवराज शर्मा	,,

वर्ष 17
अंक 1
पूर्णांक 65
जनवरी 1991

सोमसी

पर्वतीय कला, संस्कृति साहित्य की
त्रैमासिक शोध पत्रिका

सम्पादक
डॉ० बंशीराम शर्मा

संयुक्त सम्पादक
सरोज सांख्यायन

उपसम्पादक
कु० जयवन्ती चौहान

प्रकाशन सहयोग
डॉ० कर्म सिंह

प्रूफशोधक
निर्मल कौशल

हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी शिमला

प्रकाशक : सचिव
हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी
संगरमल भवन, क्लिफ-एण्ड-एस्टेट
शिमला-171 001

मूल्य : एक प्रति : 3/- तीन रुपये
वार्षिक : 12/- बारह रुपये

आवरण : हिमाचल अकादमी संग्रहालय

इस पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में दिए गए तथ्यों से सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है ।

शिक्षा विभाग के पत्र संख्या ई० डी-एन० एच० 6 (8)—6(3) 1/75, दिनांक 24 फरवरी, 1975 द्वारा हिमाचल के सभी कालेजों पाठशालाओं व ज़िला पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत ।

मुद्रक : भारतेन्दु प्रिंटिंग प्रेस, लोअर बाजार, शिमला-1 दूरभाष : 3452

विषय सूची

क्रमांक	लेख	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय		
2.	किन्नौरी के रूपरचनात्मक तत्वों में वैभाषिक विकल्पन	प्रो० डी० डी० शर्मा	1
3.	मण्डी का प्रसिद्ध मन्दिर भूतनाथ	केशव शर्मा	10
4.	रङ् ही किन्नर तो नहीं ?	हयात फकलियाल	34
5.	मनाली का इतिहास	उधोराम अवस्थी	41
6.	स्वतन्त्रता सेनानी वज़ीर रामसिंह पठानिया	संसारचन्द 'प्रभाकर'	54
7.	रामसिंह पठानिया हिमाचल का प्रथम स्वतन्त्रता सेनानी	राजेश चौहान	66
8.	मलौण की लड़ाई	मेजर श्याम सिंह विष्ट	76
9.	भेड़ का मुंडन संस्कार (पुस्तक समीक्षा)		92
10.	शिमला में कला प्रदर्शनी		94
11.	अकादमी की गतिविधियां		97

सम्पादकीय

सोमसी पर्वतीय संस्कृति, साहित्य, कला तथा भाषाओं को समर्पित पत्रिका है। हम इसके प्रत्येक अंक के माध्यम से ऐसी सामग्री पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं जो उनके लिए ज्ञानवर्द्धक होने के साथ-साथ संग्रहणीय तथा शोधपरक हो। पत्रिका के आकार-प्रकार में इस अंक से परिवर्तन किया गया है ताकि यह अधिक आकर्षक हो कर पुस्तक की भांति संग्रहणीय बन सके। इस कलेवर में प्रकाशित करने पर पत्रिका के प्रस्तुत अंक में अपेक्षाकृत कम सामग्री आ पाई है, इस कठिनाई को दूर करने के लिए अंक में सौ के स्थान पर एक सौ दस पृष्ठ रखे गए हैं। आशा है सुविज्ञ पाठकों को पत्रिका का यह आकार पसन्द आएगा। मुद्रण सम्बन्धी कठिनाइयों के कारण गत अंकों को प्रकाशित करने में बिलम्ब हुआ है, इस के लिए हम अपने पाठकों व ग्राहकों से क्षमा प्रार्थी हैं।

प्रस्तुत अंक में विविध विषयों पर लेख संकलित हैं। इनमें भाषा विज्ञान पर प्रो० डी० डी० शर्मा का लेख किन्नौरी के रूप रचनात्मक तत्वों में वैभाषिक विकल्पन', लोक संस्कृति पर मण्डी का प्रसिद्ध मन्दिर भूतनाथ (केशवचन्द्र), हयात फकलियाल का उत्तरप्रदेश के रङ् तथा हिमाचल प्रदेश के किन्नरों के जनजीवन के सम्बन्ध में ज्ञानवर्द्धक तुलनात्मक लेख 'रङ् ही किन्नर तो नहीं ?' और इतिहास पर 'मनाली का इतिहास' (उधोराम अवस्थी), भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के प्रथम स्वतन्त्रता सेनानी वज़ीर रामसिंह पठानिया पर संसार चन्द प्रभाकर तथा राजेश चौहान के लेख एवं मेजर श्याम सिंह विष्ट का खोजपूर्ण लेख (मलौण की लड़ाई) आदि उल्लेखनीय हैं।

सोमसी के अगले अंकों को हम विशेषांक के रूप में प्रकाशित करेंगे और महत्त्वपूर्ण विषयों पर जानकारी प्रस्तुत करने का प्रयत्न करेंगे।

—बंशीराम शर्मा

किन्नौरी के रूपरचनात्मक तत्त्वों में वैभाषिक विकल्पन

प्रो. डी. डी. शर्मा

हिमाचल प्रदेश का जन-जातीय क्षेत्र किन्नौर यद्यपि भौगोलिक तथा प्रशासनिक दृष्टि से एक इकाई के रूप में लिया जाता है किन्तु भाषाई दृष्टि दो प्रमुख वर्गों एवं कई उपवर्गों में विभक्त है। इसके तीन प्रशासनिक खण्डों (उप-मण्डलों) में से दो अर्थात् कल्पा तथा निचार उप-मण्डल की भाषा एक भिन्न भाषाई वर्ग से सम्बन्ध रखती है तथा तीसरे उप-मण्डल की भाषा अर्थात् पूह उप-मण्डल एक भिन्न भाषाई वर्ग के साथ। इन भाषिक वर्गों को क्रमशः निम्न-किन्नौरी तथा उच्च-किन्नौरी कहा जा सकता है। इनमें से प्रत्येक के पुनः अनेक उपवर्ग हैं जो कि इस भूभाग के उन्नत पर्वत शिखरों तथा नदी घाटियों में विभक्त होने के कारण बन गये हैं। इन क्षेत्रों में कतिपय अलंघ्य प्राकृतिक अवरोधों के कारण इन भाषिक उप-वर्गों में अनेक ऐसी भाषिक विशेषताएं विकसित हो गई हैं जो कि अन्यथा एक ही वर्ग के साथ सम्बद्ध होने पर भी एक दूसरे से काफी विभेद रखती हैं। किन्हीं-किन्हीं में तो आधारभूत शब्दावली का भी अन्तर पाया जाता है जो कि वक्ताओं के विभिन्न प्रजातीय सम्मिश्रणों तथा भाषिक सम्मिश्रणों के कारण हो सकता है।

उपर्युक्त दो वर्गों में से प्रथम वर्ग अर्थात् निम्न-किन्नौरी का सम्बन्ध तिब्बत-हिमालय परिवार के उस सार्वनामिक भाषा वर्ग के साथ है जिसका कि मूलाधार आग्नेय परिवार की मुण्डा भाषा है तथा दूसरे वर्ग अर्थात् उच्च किन्नौरी का सम्बन्ध

तिब्बत-बर्मी परिवार की उस भाषा के साथ है जिसका मूलाधार तिब्बती भाषा है।

निम्न किन्नौरी को उत्तरी मुण्डा वर्ग की प्रतिनिधि भाषा माना जाता है क्योंकि इस में मुण्डा भाषाओं की सभी भाषिक विशेषताएं पायी जाती हैं। इसी प्रकार उपरि किन्नौर की बोलियों में केन्द्रीय तिब्बती की विशेषताएं प्रमुख रूप से पायी जाती हैं, यद्यपि अनेक सीमान्त क्षेत्रों में दोनों के बीच काफी भाषिक सम्मिश्रण भी देखा जाता है। इनके अतिरिक्त निम्न किन्नौर में एक आर्य भाषा-परिवार की बोली भी प्रचलित है जिसका प्रयोग यहां की अनुसूचित जाति के लोगों द्वारा किया जाता है तथा जिसमें अपने दो जातीय विभेद भी पाये जाते हैं।

प्रस्तुत लेख में हम केवल निम्न किन्नौरी की विभाषाओं में उपलब्ध रूप-रचनात्मक विभेदों पर विचार करेंगे और उनके प्रकाश में देख सकेंगे कि किन-किन क्षेत्रों की बोलियां रूप रचनात्मक दृष्टि से एक दूसरी के साथ अपने नैकट्य को व्यक्त करती हैं। यद्यपि शब्दावली की दृष्टि से भी इनके काफी पारस्परिक अन्तर पाये जाते हैं किन्तु न तो किसी लेख में इन सब का परिगणन ही हो सकता है और न इनका कोई अभिरचनात्मक विश्लेषण ही किया जा सकता है। अतः हम यहाँ पर केवल व्याकरणिक कोटियों से सम्बद्ध शब्द रूपों तथा इन कोटियों के संरचक तत्वों के सम्बन्ध में ही विचार करेंगे।

यहां पर यह संकेत कर देना भी अनुचित न होगा कि यद्यपि निम्न किन्नौरी की विभिन्न विभाषाओं में यह रूप-रचनात्मक विकल्पन न्यूनाधिक मात्रा में सभी में पाया जाता है किन्तु छितकुली (सांगला घाटी के दो ग्रामों-छितकुल एवं रक्छम की बोली) में ये विभेद अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं, फलतः छितकुली का परिगणन किन्नौरी की एक विशिष्ट बोली के रूप में किया जाता है।

प्रस्तुत विश्लेषण में निम्न किन्नौर की जिन आठ क्षेत्रों की बोलियां पर विचार किया जा रहा है वे हैं :—

1. छितकुल, 2. किल्बा, 3. पांगी, 4. कल्पा (चीनी), 5. निचार, 6. लबरङ्, 7 कामरू, 8. मूरङ् । (विशेष :- हमारे अगामी विश्लेषण में ये क्रमदर्शक अंक ही तत्-तत् बोलियों का प्रतिनिधित्व करेंगे) ।

मुण्डा वर्ग की भाषाओं के समान ही किन्नौरी की पद रूप-रचना में लिंगात्मक व्याकरणिक कोटि का अभाव तो है ही, पर साथ ही विशेषणों तथा क्रिया-विशेषणों में वचन कोटि का भी अभाव पाया जाता है। फलतः अव्ययों के समान ये भी अविकारी वर्ग के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि विकारी वर्ग में परिगणित किए जा सकने वाले पद-वर्ग रह जाते हैं—संज्ञा, सर्वनाम तथा क्रिया पद अर्थात् इन्हीं पद वर्गों में वचन, पुरुष, कारक तथा काल सम्बन्धी विकार पाये जाते हैं। हमारा प्रस्तुत विवेचन भी किन्नौरी की इन्हीं व्याकरणिक कोटियों तक परिसीमित होगा। इन्हें क्रमशः संज्ञा, सर्वनाम तथा क्रियापदों की रूप रचनाओं में निम्नलिखित रूपों में पाया जाता है।

संज्ञा पद :- संज्ञा पदों में रूप-रचनात्मक विकार के क्षेत्र हैं - वचन एवं कारक, जिन्हें किन्नौरी की उपर्युक्त विभाषाओं में इस रूप में देखा गया है।

बहुत्व बोधक संरचक प्रत्यय :- किन्नौरी की सर्वनाम पद रचना में यद्यपि तीन वचनों की सत्ता पायी जाती है पर संज्ञा-पद-रचना में केवल दो ही वचनों अर्थात् एक वचन तथा बहु-वचन की ही सत्ता पायी जाती है। उल्लेख्य है कि जहां पर प्रसंग से अथवा बहुत्व या संख्यावाचक शब्दों से बहुत्व का संकेत-बोध सन्दर्भ से ही हो जाता है वहां पर सामान्य बोल-चाल की भाषा में बहुत्व के बोधक प्रत्यय का प्रयोग नहीं किया

जाता है, यथा—**सुम छाङ्** तीन बच्चे, **चेइ प्याच्** सारी चिड़ियाएं, **मुत्तुक पिशि** बहुत सारी विल्लियां। इन सब में बहुत्व बोधक संज्ञा पदों का प्रयोग मूल रूपों में ही किया गया है। इसके अतिरिक्त अप्राणिवाचक संज्ञा पदों में भी प्राय: ब० ब० बोधक प्रत्ययों का योग नहीं किया जाता है। प्राणिवाचक पदों में वैभाषिक विकल्पनों के तीन रूप मुख्यत: पाये जाते हैं, जोकि इस प्रकार हैं :— **-आ/ओ** (2—5, 7—8) **-चङ्** (1), **पङ्** (6)। इन विकल्पनों को निम्नलिखित प्रकार के वाक्यों के मोटे पद में पाया गया है—पेड़ पर **चिड़ियाएं** बैठी हैं। **बच्चे** खेल रहे हैं आदि।

सार्वनामिक पदों के बहुवचनीय रूपों में ये वैकल्पिक रूप **-गा/गो** (2—5, 7—8), **चङ्** (1), **पङ्** (6) के रूप में पाये गये हैं।

कारकीय संरचक प्रत्यय :— कारकीय संरचक प्रत्ययों के वैभाषिक विकल्पन निम्न रूपों में पाये जाते हैं—

कर्त्ता :- कर्त्ता कारक में केवल 'साधक कर्त्ता' (सकर्मक भूत-कालिक क्रिया का कर्त्ता) में ही विभक्ति प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है। इसके वैकल्पिक रूप मिलते हैं— **-स्/इस्**, (2—5, 7—8), **चि** (1), शून्य (6)। प्रथम विकल्पनों में से **-स्** का योग अजन्त पदों के साथ तथा **-इस्** का हलन्त पदों के साथ किया जाता है। इन्हें निम्न प्रकार के वाक्यों के रेखांकित पदों में पाया गया है—**लड़के ने** कहा, **मोहन ने** पूछा, **मां ने** दिया आदि।

कर्मकारक :— किन्नौरी में अप्राणिवाचक संज्ञा पदों में किसी विभक्ति प्रत्यय का प्रयोग नहीं किया जाता है, किन्तु प्राणिवाचक संज्ञा पदों के साथ एक वचन में **-उ** (2—5, 7—8) **-रा/ता** (6), शून्य (1) प्रत्ययों का तथा ब० ब० में **-नु** (2—5, 7—8) **-रा** (6) तथा शून्य (1) का प्रयोग पाया जाता है। इन्हें निम्न प्रकार के वाक्यों के मोटे पदों में पाया गया है—**घोड़**

को पानी दो, वह **बच्चे** को पीटता है। लड़कों ने **लड़कियों** को देखा आदि।

कर्म-सम्प्रदान :- कर्म सम्प्रदान के बोधक वैभाषिक विकल्पन इस रूप में पाये गये हैं— **छेतिङ्** (1), **ताङेस्** (2), **स्ताङ्** (3—4, 7—8), **सितिङ् का** (6)। इन्हें निम्न वाक्य के मोटे पद में पाया गया है—मुझे एक **महीने के लिए** घर जाने दो। 'किन्तु मेरे लिए' 'तुम्हारे लिए' जैसे सार्वनामिक पदों में ये रूप इस प्रकार पाये गये हैं— **छेतिङ्** (1), **ताङेस्** (4), **उङ्** (2—5) तथा **-रा/ला** (6)।

करण कारक :- 'कुल्हाड़ी **से** काटता है', 'पक्षी पंखों **से** उड़ते हैं' जैसे करण कारकीय प्रत्ययों का वैभाषिक विकल्पन एक वचन में **-स्** (2—8) **-चि्** (1) के रूप में तथा ब० व० में **-अस्** (2—5, हलन्त पदों के साथ), **-च्** (6—8) एवं **-चि्** (1) के रूप में पाया जाता है।

साधक करण :- प्रयोज्य कर्त्ता में साधक करण के रूप में जिन विभक्ति संरचकों का प्रयोग पाया जाता है वे हैं :— **दोक्च्** (2—5), **दाचि्/दाङ्चि** (1), शून्य (7—8), यथा 'वह लड़के **से** काम करवाता है।'

किन्तु भाववाच्य प्रयोगों, यथा 'तुमसे नहीं पढ़ा जायेगा' आदि में साधक कर्त्ता के साथ दोक्च् (2—3), हुसिम् (4—5, 7—8), रङ् (6) हुसि/हुइ (1) जैसे वैभाषिक विकल्पनों की स्थिति पायी जाती है।

सहार्थक :- '**तुम्हारे साथ** दूसरा कौन था', 'उसने **अपने पिता के साथ** जाना है। जैसे वाक्यों के मोटे पदों के सहार्थक प्रत्ययों का विकल्पन इन रूपों में पाया गया है— **-तिङ्** (1), **-रङ्** (2—6) **नङ्** (7) तथा **दङ्**, एके (8)।

अपादान :- 'मैं **वहां से** तुम्हारे लिए कपड़े लाया हूं' इस वाक्य में 'वहां से' पद के लिए जो वैभाषिक रूप प्राप्त हुए हैं, वे हैं—**हौदाचि/हौगाचि** (1), **दोङच्** (2,8), **दिङच्** (3) **हौदङि** (4), **दौकुच्** (5, 7), **दात** (6)। उपर्युक्त वैभाषिक रूपों के आधार पर अपादान के संरचक प्रत्ययों के विकल्पनों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है— **-चि** (1), **-च्** (2—3, 5, 7—8) **-ङि** (4), **त्** (6)। यही रूप 'पेड़ से' आदि पदों में भी मिलते हैं।

सम्बन्ध कारक :- 'राम **की** माँ, गाय **का** दूध, मां **का** दूध, मामा **का** गांव' आदि संज्ञा पदों के बीच सम्बन्ध बोधक प्रत्ययों की स्थिति **-ऊ/ओ** (2—8) तथा **-ए** (1) के रूप में पायी जाती है। किन्तु 'तेरा, मेरा, उसका' आदि सार्वनामिक रूपों में यह सम्बन्ध वाचक तत्त्व केवल शून्य (2—8) तथा **-ए** (1) के रूप में पाया जाता है।

किन्तु स्वामित्व के बोधक सम्बन्धों की अभिव्यक्ति में स्वामित्व बोधक प्रत्ययों का रूप मिलता है— **-दा** (1—2, 5, 7—8), **दङ** (2, 4), **रा** (6), यथा—तुम्हारे **पास**, हमारे **पास**, बड़े भाई **के पास** आदि में।

अधिकरण :— अधिकरण अथवा आधार बोधक कारकीय प्रत्ययों में खेत **में**, पानी **में**, गांव **में** आग **में**' आदि प्रयोगों में आधेय की अन्तः स्थिति (**में**) का बोध कराने वाले प्रत्ययों के एक वचनीय विकल्पन में **-दू/दा** (1) **ऊ/ओ** (2—5, 7—8) तथा **नऊं** (6) का प्रयोग तथा ब० व० में **-दू** (1) **-ओनो** (2—5, 7—8) तथा **नऊं** (6) का प्रयोग पाया जाता है। किन्तु बाह्य स्थिति के बोधक **'पर'** के बोधन के लिए जिन प्रत्ययों का विकल्पनात्मक प्रयोग पाया जाता है वे हैं— **निङ** (1) **देन्** (2—5, 7—8), तथा **थोरिङ/नऊं** (6) यथा 'छत **पर**, पेड़ पर आदि में।

सार्वनामिक रूप रचना :— सार्वनामिक रूपों में न केवल

रूप रचनात्मक विकल्पन पाया जाता अपितु मूल पदों में भी वैभाषिक विकल्पन की स्थिति पायी जाती है। उदाहरणार्थ, संकेत वाचक 'वह' के 4 विकल्पन अर्थात् **होयो** (1), **ज़ो** (2—4), **नू** (5—7), **ओनू/ओनो** (6, 8) पाये जाते हैं तथा 'यह' के **नो/नू** (2—3, 5), **ज़** (4, 7), **उनूं** (8), **ज़ी** (6) **हुइ** (1) इसी प्रकार पुरुष वाचक 'वह' के रूप मिलते हैं— **यो** (1) **दो** (2—4, 6—7) **नूं** (5), **होदो** (8), **एमे** (1)। प्रश्न वाचक सर्वनामों में क्या के विकल्पन मिलते हैं— **थ** (1, 3, 7—8), **खे** (1), **छ** (2, 4) **छे** (6) **ठो** (5) तथा कौन के वैकल्पिक रूप हैं— हात् (2—4, 5, 7—8), **सू** (1) उङ् (6)। विभक्ति प्रत्ययों के विकल्पन संज्ञापदों के समान ही होते हैं।

क्रियापद रचना :— किन्नौरी के रूपरचनात्मक विकल्पनों का व्यापक रूप उस की क्रिया-पद-रचनाओं में देखने को मिलता है। वैभाषिक विकल्पनों के इन कतिपय रूपों को निम्नलिखित क्रिया पद रूपों में देखा जा सकता है।

भावार्थक संज्ञा/क्रियार्थक संज्ञा :- क्रिया के भावार्थक(infini tive) तथा क्रियार्थक संज्ञा (Verbal noun) के संरचक प्रत्ययों का विकल्पन इन रूपों में देखा जा सकता है।

भावार्थक संज्ञा :- (जाना)—**अङ्** (1, **रोङ्**, **बेअङ्**—5), (**बेमू** 2, 7—8) **मो** (**बेमो** 3—4), मा (**जे-मा**—6)। भावार्थक संज्ञा के उपर्युक्त वैकल्पिक रूपों को 'मैं **जाना** चाहता हूं' जैसे वाक्यों में देखा जा सकता है।

इसी प्रकार '**वह करने** जा रहा है' जैसे वाक्यों में 'करने/ करने के लिए' जैसे क्रियार्थक संज्ञा रूपों में वैकल्पिक प्रत्ययों की स्थिति इस प्रकार पायी जाती है— **अन्** (**लाचन्**—1), **मू/नू** (**लान्मू**, **लान्नू**—2—4, 7—8), **मा** (**ला-मा-6**), शून्य (**लान्**—5)।

सामान्य वर्तमान :- किन्नौरी में वर्तमान काल की संरचना वर्तमान कालिक कृदन्त विशेषण तथा सत्तार्थक क्रिया के वर्तमान-

कालिक रूपों के योग से की जाती है। इसमें सामान्य तथा सातत्य बोधक वर्तमान की संरचना में कोई अन्तर नहीं किया जाता है। 'वह **करता है**, या **कर रहा है**' के वैभाषिक विकल्पनात्मक रूप होंगे—

लत्चा-तो (1), **लान्च-डू** (2, 7), **लानो-दू** (2, 8), **लान-दू** (5) **लान्च्** (4), **लाउ तस्** (6)। ऐसे ही 'मैं **पीता हूं**' — **तोङा** (1) **तोङ्च डुक** (2, 7) **तोडणे** (2), **तुङ् तुक्** (5), **तुञ्ची** (6), **तुङ् स्तोक** (7—8)।

पूर्ण वर्तमान :— पूर्ण वर्तमान की संरचना संयुक्त तथा असंयुक्त दोनों ही रूपों में पायी जाती है, यथा—'तुम्हारा काम **हो गया है**,' — **असि-तो** (1) **हाचे** (2) **हचिस्** (3-4, 7-8), **हचिक्** (5), **वंक्यारे** (6)। इसी प्रकार हम **कर चुके** हैं में—**लान लान डुच्** (2), **लचितोच्** (1), **लान लान नितोच्** (3), **लान लान तोच्** (4), **लान लान दोई** (5), **लदक्याऊ** (6), **ला ला तोच्** (7), **लान सुम सुम** (8)।

इसी प्रकार 'काम **करते करते** देर हो गयो' में 'करते करते' के वैकल्पिक रूप होंगे—**लाचा लाचा/लेचि लेचि** (1), **लानो लानो** (2—6, 8), **लान्च-तो, लान्च-तो** (7)।

भूतकाल :— भूतकालिक रूपों की रचना भूतकालिक कृदन्त विशेषण तथा सत्तार्थक धातु के भूतकालिक रूपों के योग से की जाती है। इसके रूपों में भी पूर्ण, अपूर्ण, सातत्य आदि का भेद नहीं किया जाता है यथा 'उसने **पूछा**' में 'पूछा' के वैकल्पिक रूप होंगे—**रुते** (1) **इयोस्** (2, 7) **इसित** (4), **इसक** (5), **स्र्** (6), **इस्** (8)। ऐसे ही 'उसने **कहा**' में 'कहा' के वैभाषिक विकल्पन होंगे—**रिन्दे** (1), **रिङो** (2, 7), **रिङा** (3-4), (**रिङा** (3—4), **रिङ्** (6, 8), **रिङ्** (5) आदि।

भविष्यत् काल :— भविष्यत् कालिक रूपों की रचना भविष्यत् कालिक प्रत्ययों के योग से की जाती है, 'वह **जायेगा**' जैसे

वाक्यों में 'जायेगा' के वैभाषिक विकल्पनात्मक रूप होंगे— **रुनो** (1), **बितो** (2—4, 7—8), **ज़ेई** (6), तथा **'आयेगा'** के रूप होंगे— **तुन्ना** (1), **बतो** (2—4, 7—8), **तुरो** (6) आदि।

पक्ष :— यद्यपि जैसा कि ऊपर कहा गया है कि आम बोलचाल में किन्नौरी का विशेष के सामान्य रूपों से ही क्रिया के सातत्यात्मक पक्ष का भी संकेत बोध कराती हैं, किन्तु स्पष्टीकरण की नितान्त अपेक्षा होने पर इसे संयुक्त क्रिया रूपों से भी अभिव्यक्त किया जा सकता है, यथा 'वह खाता ही रहा' जैसे वाक्यों में 'खाता ही रहा' के वैभाषिक वैकल्पिक रूप मिलते हैं—**जा हुनी** (1), **ज़ाओ बेओच्** (2—4), **जाच़ेआ** (5) **ज़ाओ पशो** (6), **जाओ तोकेच्** (7—8)।

वृत्ति :— किन्नौरी के विभिन्न वृत्यर्थक रूपों की संरचना में भी वैभाषिक विकल्पनों की यही स्थिति पायी जाती है, यथा, (आज्ञार्थक वृत्ति) **'बंठ जाओ'— पोशि** (1), **तोशिञ्** (2—4, 7—8), **तोश्** (5), **पोश्मा** (6) **आदि।**

इस प्रकार निम्न किन्नौरी की उपर्युक्त आठ विभाषाओं के विभिन्न संरचक प्रत्ययों को देखने पर कहा जा सकता है कि इसमें संरचनात्मक तत्त्वों की दृष्टि से वैभाषिक विकल्पनों का क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। इन सबका विस्तृत तुलनात्मक विश्लेषण किए जाने पर ही इस विविधता का व्यक्त प्रस्तुतीकरण सम्भव है। आशा है कोई शोधार्थी इस विषय को अपनाकर किन्नौरी पद-संरचना के इस बहुपक्षीय रूप का उद्‌घाटन करने का अवश्य प्रयास करेगा।

●

भूतनाथ

केशव शर्मा

भूतनाथ का मन्दिर मण्डी जनपद के सभी मन्दिरों में लोकप्रिय व सर्वमान्य है। इस मन्दिर का निर्माण सन् 1527 ईस्वी में मण्डी रियासत के राजा अजबरसेन ने करवाया था। मण्डी नगर का इस प्रकार यह प्राचीनतम शिवालय है। अन्य सभी शिव व शक्ति तथा वैष्णव मंदिरों का निर्माण इसके बाद हुआ।

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट होता है कि राजा अजबरसेन शैव धर्म के मतावलम्बी थे। इस मन्दिर से पूर्व पुरानी मण्डी में राजा अजबर सेन की रानी सुलक्षणा देवी अथवा सुल्ताना देवी द्वारा निर्मित त्रिलोकनाथ के मन्दिर से पहले पुरानी मण्डी व भिऊली में किसी मन्दिर का प्रमाण नहीं मिलता जिसे मण्डी रियासत के राजाओं ने बनवाया हो। मण्डी रियासत के संस्थापक राजा बानसेन ने पुरानी मण्डी (बलटोहा) या भिऊली, जो उसकी राजधानी थी, में कोई मन्दिर बनवाया हो और किसी भीषण भूकम्प अथवा पहाड़ी के खिसक जाने से वह ध्वस्त हो गया हो तो अलग बात है अन्यथा राजा अजबरसेन ने मण्डी नगर के उत्तर में वनों से घिरे पर्वतीय क्षेत्र में महर्षि पराशर के मन्दिर का निर्माण करवाया था।

भूतनाथ का विवरण लिखते समय दो बातों को दृष्टि से ओझल करना तथ्यों से मुंह फेरना होगा। एक यह कि यह लोक-

प्रसिद्ध मन्दिर ऐतिहासिक स्मारक है दूसरे यह कि इसका सम्बन्ध एक मत विशेष से है।

प्राचीन काल में जब से भी देवालयों के निर्माण की परम्परा आरम्भ हुई उस परम्परा के प्रवर्तक राजा थे। वे पीढ़ी दर पीढ़ी इस क्रम को चलाते रहे। सौभाग्यवश मन्दिरों का निर्माण करवाने वाले लोगों के बारे में अनेक स्थानों में शिलालेखों या प्रस्तर पटलों पर निर्माण सम्बन्धी सूचनाएं किस वर्ष किस सम्वत् किस तिथि आदि को बना आदि। इसलिए कहा जा सकता है कि मन्दिरों की ठोस ऐतिहासिकता है।

प्राचीनकाल में धर्म और राज्य एक दूसरे के अंग थे। राजाओं द्वारा धर्म (देव) स्थानों का निर्माण करवाया जाना इस बात को प्रमाणित करता है। यह भी कहा जा सकता है कि राजा व राज्य की मान्यता के लिए उसकी धार्मिक पहचान आवश्यक थी।

आजकल भारत के प्राचीन धर्मों, मतों, सम्प्रदायों के बारे में लिखने वाले अनेक विद्वान ऐतिहासिक तथ्यों पर कम ध्यान देकर ऐतिहासिक खोज की वैज्ञानिक पद्धति को अधिक न अपनाते हुए अपने मन पसन्द मंतव्य प्रस्तुत करते व तदनुरूप निष्कर्ष निकालते हैं। मण्डी जनपद समेत तमाम पर्वतीय क्षेत्रों को वे शिव व शक्ति की लीला स्थली उनका जन्म स्थान घोषित करते हैं। वे शिव शक्ति ही नहीं समूची आर्य जीवन पद्धति जिसको कि संस्कार व परम्पराओं के अविच्छिन्न पाशों में बांध रखा है, को ही हिमालय की देन बताते हैं।

परन्तु जिन विद्वानों ने भारत के इतिहास और धर्म पर गूढ़ व व्यवस्थित अन्वेषण व चिंतन करके लिखा है, उनकी मान्यतायें बहुत भिन्न हैं। भूतनाथ जैसे 16वीं सदी में बनें मन्दिर व अन्य इसी प्रकार के मन्दिरों के निर्माणकाल से किसी मत विशेष के बारे में जो जानकारी प्राप्त होती है वह अपर है लेकिन लोक प्रचलित धार्मिक परम्परा और इस में यह बात चिन्हित

करना महत्त्वपूर्ण है कि राज देवताओं का स्थान बहुत ऊंचा है और लोक देवताओं का स्थान काफी न्यून है। संयोगवश यह कह देना उचित होगा कि आर्य ऋषि जैसे वशिष्ठ, परशुराम, पराशर, शुकदेव, मार्कंडेय आदि शिव-पार्वती अथवा सती, विष्णु लक्ष्मी ब्रह्म-ब्रह्माणी आदि व कालांतर है राम-सीता, कृष्ण-राधा आदि अन्योन्य राजवंशों के पूजनीय देव हुये। इनके मुकाबले लोक देवता तथा गण प्रमुख या गणमान्या नारी ग्राम व समुदाय के प्रतिष्ठित पुरुष नारी, योद्धा वीर तथा कालांतर में राणा व ठाकुरादि लोक व जन में अपना स्थान बनाये रहे।

जहां तक किसी मत या सम्प्रदाय की व्यापकता का प्रश्न है- शैव शाक्त व वैष्णव मतों का विस्तार सारे भारत में शनैः शनैः हुआ। एक साथ व एक ही बार इनका व्यापक विस्तार नहीं हुआ।

भूतनाथ शिव का ही एक प्रचलित नाम है। इसके अन्य अनेकों नाम है यथा महादेव शंकर, शंभु, नीलकंठ आदि। इतिहास बेत्ताओं के अनुसार सर्वप्रथम महादेव के नाम से एक देवी की पूजा करते थे इसका प्रमाण वे मोहनजोदड़ों (सिन्ध पाकिस्तान) की पुरातत्व बेत्ताओं व इतिहासज्ञों द्वारा करवाई गई खुदाई में प्राप्त मृत्तिका मुहरों को मानते हैं। उन मिट्टी की पकाई मोहरों पर जटाधारी नग्न शरीर शिव व महादेवी की नारी मूर्तियां अंकित है। उनके अनुसार मोहनजोदड़ों व हड़प्पा संस्कृति के मुख्य निर्माता द्रविड़ थे द्रविड़ प्रजाति के लोग भूमध्य सागर क्षेत्र से यहां पहुंचे थे। मोहनजोदड़ो के प्राकृतिक प्रकोप अथवा मानवीय दुःसाहस से नष्ट हो जाने पर द्रविड़ों का प्रयाण दक्षिण की ओर जारी रहा। उन्होंने अपने प्रिय देव व देवी की पूजा को वहां भी जारी रखा। इन देवों के साथ नंदी (बैल) की उपस्थितित भी मोहनजोदड़ो से प्रभावित हो गई थी।

द्रविड़ लोगों ने कृषि प्रधान नगर संस्कृति व काफी उत्पादन की स्थिति में व्यापार का व्यवसाय विकसित कर लिया था परन्तु खेती-बाड़ी का काम आरम्भ करने के प्रारम्भिक दौर में

उनके जीवन व विकास सम्बन्धी मान्यताएं उनकी पूजा पद्धति का अंग थी। अतः महादेव व महादेवी के मानवीकरण से बहुत पहले द्राविड़ों में सृजन व प्रजनन के प्रतीक लिंग व योनी को पूजने की प्रथा प्रचलित थी। फसल तैयार हो जाने और धरती को रोपाई के लिए तैयार कर लेने पर रजस्वला कुमारियों के नृत्य की परम्परा के पीछे भी यही धारणा थी कि रजस्वला कुमारियों के नृत्य से धरती की उर्वरता में वृद्धि हो जायेगी। आज तक भी महादेवी व महादेव के मन्दिरों में योनि व लिंग के प्रतीकों की पूजा प्रचलित है।

कालांतर में आर्यों ने जो द्रविड़ों के बाद भारत आये, और यहां पहुंचने से पूर्व मूलतः पशुपालक थे, और जो प्रकृति की शक्तियों व पितरों की पूजा करते थे, अपने पूर्वगामियों के देव-देवी को पूजा प्रतीकों समेत अपना लिया।

परन्तु किसी भी देव व देवी के कुल गोत्र के बिना उस की मान्यता नहीं होती थी क्योंकि उनके पितरों का तो उनके साथ सीधा सम्बन्ध था अतः पौराणिक आख्यानों में महादेव और महादेवी के जन्म परिवार व कार्यकलापों का विवरण अन्य पूर्व पुरुषों व कुल माताओं के समान रचा गया। इस प्रकार जातीय समन्वय की प्रक्रिया में द्रविड़ व आर्य पूजा पद्धतियां भी आपस में घुल गईं। इस प्रकार शिव अथवा महादेव दक्ष प्रजापति की पुत्री सती के पति हो गये। उन्हें हिमालय की पुत्री पार्वती का अधिष्ठाता बताया गया है। आर्य पुत्रियों द्वारा अनार्य शिव का वरण किया गया। इस प्रकार ये अति प्राचीन आख्यान युगों से भारत में रहने वाली हर जाति प्रजाति की स्मृति के स्थायी अंग बन गये।

कुछ इतिहासकारों के मतानुसार शिव किरात जाति से सम्बन्ध रखते थे। किरातों का हिन्दूकुश पर्वत से लेकर आसाम की 'खासी गारो' पहाड़ियों तक सदियों से अस्तित्व रहा। डॉ० रांगेय राघव ने अपनी पुस्तक 'गाथा महागाथा' में लिखा है कि किरात जाति की तीन प्रशाखायें थी, यक्ष, गन्धर्व व किन्नर।

राहुल सांकृत्यायन ने भी भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में किरातों का होना स्वीकार किया है। भगवद्शरण उपाध्याय, डी. डी. कौशाम्बी, काशीनाथ जायसवाल, डॉ. सांकलिया, ताराचन्द व व ईश्वरी प्रसाद सभी इतिहासकारों ने किरातों का अस्तित्व स्वीकार किया है। कालांतर में द्रविड़, किरात व आर्यों की अर्तुभक्ति के परिणाम स्वरूप एक दूसरे के देवताओं व पूजा पद्धतियां को भी सबने समान रूप से स्वीकार कर लिया परन्तु तथ्यों के अनुरूप शिव व शक्ति का द्रविड़ों से ही सम्बन्ध अधिक लगता है।

शिव व शक्ति की पूजा हिमालय के पर्वतीय क्षेत्रों में बहुत प्रचीनकाल से प्रचलित थी इसके ठोस प्रमाण तो नहीं प्राप्त होते परन्तु लोक में प्रचारित प्रसारित अनेकों किस्मों से प्रश्न जरूर उठ खड़ा होता है। सम्भवतः हड़प्पा संस्कृति के समय से पर्वतीय क्षेत्रों किरात जाति जिनके जातीय अवशेष हमारे हिमाचल में आज भी विद्यामान है के लोगों ने शिव व शक्ति को अपने देवरूप में स्वीकार कर लिया हो।

वैसे ऐतिहासिक रूप में शैवमत को पर्वतीय क्षेत्रों में लाने का कार्य आदि शंकराचार्य ने ही किया है। केरल वासी शंकर जो शिव भक्त थे ने भारत के चारों कोनों में शिव पीठों की स्थापना की। अमरनाथ, बदरीनाथ दोनों हिमालय में व श्रृंगेरी व द्वारिका अन्यत्र स्थापित किये। इन चार मठों की स्थापना के बाद सारे देश में शैवमत का बड़ी तीव्रगति से प्रचार व प्रसार होने लगा। दक्षिण भारत में तो शैवमत की कई शाखाएं यथा लिंगायत व भार शिव आदि बनती गई। कालांतर में शैव शाक्त मतों द्वारा वायाचार व तांत्रिक साधना का व्यवहार आरम्भ कर दिया गया। मन्दिरों की प्राचीरों पर नर-नारी संसर्ग प्रदर्शन के लिए मूर्तियों का बनना प्रचलित हो गया।

भारत के पूर्व, उत्तर, पश्चिम व दक्षिण सब जगह अनेकों राजवंशों में शैवमत को अपना राजधर्म बना लिया। मण्डी रियासत के सेन वंशी राजाओं ने भी शैव धर्म को अपना

लिया। परिणामस्वरूप यहां भी शिव मन्दिर बनाये जाने लगे। राजा अजबरसेन ने तथा उनकी रानी ने इस काम में पहल की। चम्बा व बजौरा (कुल्लू) में इससे काफी पहले शिव मन्दिरों का निर्माण आरम्भ हो गया था। बैजनाथ (कांगड़ा) का शिव मन्दिर भी इससे पहले बनाया जा चुका था। भरमौर में मणिमहेश की मान्यता भी काफी पुरानी है परन्तु लगता है आदिशंकराचार्य के शिव पीठ (मठ) स्थापित करने के बाद ही ऐसा है।

भूतनाथ का मन्दिर मण्डी नगर के लगभग केन्द्र में स्थित है। आज इसके एक छोर पर प्रसिद्ध बाजार 'चौबाटा' स्थित है। इसके पृष्ठभाग में 'समखेतर' मुहल्ला है। प्रवेश द्वार से व्यास नदी के तट की ओर जाने वाला सर्वाधिक व्यस्त व कपड़े के व्यापारियों से भरा पड़ा 'भूतनाथ' बाजार है। पश्चिमी पार्श्व में काफी दूर जाकर 'सायण' व अस्पताल क्षेत्र है। दक्षिण पार्श्व में थोक व्यापार का केन्द्र 'महाजन बाजार' व स्वर्णकारों का मोती बाजार है।

जिस समय भूतनाथ मन्दिर का निर्माण आरम्भ किया गया था तब इस स्थान के इर्द-गिर्द पूरे क्षेत्र में घना वन था। इसके साथ पूर्व दक्षिणी भाग में एक बड़ा गांव था। प्रसिद्ध अंग्रेज इतिहासकारों हचिसन व बोगेल के कथनानुसार उसका नाम 'सधयाना' था।वह एक राणा की राजधानी थी। सेन वंशी राजाओं ने सर्वप्रथम वर्तमान मण्डी नगर से पूर्व में लगभग डेढ़ मील दूर भिऊली में अपने महल बनवाये थे। कुछ समय के बाद उनके उत्ताराधिकारी 'बलटोहा' नामक स्थान पर आ गये। इस स्थान पर आज पुरानी मण्डी बसी है। पुरानी मण्डी के एक छोर पर 'त्रिलोकनाथ' का प्रसिद्ध मन्दिर है जो अब भारत सरकार के पुरातत्व विभाग के संरक्षण में है।

भूतनाथ मन्दिर जिस स्थान पर निर्मित हुआ है उस स्थान की अद्भुतता या वहां के चमत्कार के बारे में एक लोकचर्चा आज भी मण्डी नगर व पूरे जनपद में प्रचलित है। इस लोक

चर्चा का विवरण मण्डी के इतिहास से सम्बन्धित लगभग हर पुस्तक में है। कथा कुछ इस प्रकार है - एक ब्राह्मण अपनी गाय चराने के लिये जंगल में छोड़ जाता था शाम को जब वह गाय को हांक कर घर ले जाता और उसे दूहने लगता तो गाय के स्तन खाली मिलते। वह ब्राह्मण हैरान था कि नई ब्याई गाय दूध क्यों नहीं देती और हर शाम उसके स्तन खाली कैसे हो जाते। एक दिन ब्रह्मण ने सुबह से शाम तक जंगल में गाय का पहरा किया। सारा दिन गाय यत्र-तत्र हरी घास चुगती रही हैं। जब सांझ होने को आई तो वह एक पत्थर के भूमि में पसरे टुकड़े के ऊपर जाकर खड़ी हो गई। देखते ही देखते गाय के स्तनों से स्वत: ही दूध की धारायें बह निकली। वह दूध उस पत्थर खंड में समा गया। यह दृश्य देखने के बाद उसे आकाशवाणी सुनाई दी, 'यहां पर मेरा निवास है, यहां पर एक मन्दिर का निर्माण करवाओ'। ब्राह्मण ने राजा को जाकर यह घटना सुनाई। इस प्रकार राजा वहां मन्दिर बनाने के लिए राजी हो गया।

एक कथा और भी बताई जाती है। उसमें गाय के वन में चरने व घर आकर दूध न देने की बात तो पहली कथा के ही समान है परन्तु उसके अनुसार ब्राह्मण गाय के साथ वन में पहरे के लिए नहीं जाता प्रत्युत उसे रात को स्वप्न होता है, स्वप्न में शिवजी बताते हैं कि व्यास नदी के पार जाकर उस स्थान को देखो जहां पर गाय के स्तनों से स्वत: ही दूध की धारायें वह निकलती हैं। वह मेरा आदिस्थान है। वहां पर मन्दिर का निर्माण करवाओ।

एक अन्य कथा भी है जिसमें यह बताया गया है कि गाय सारा दिन चरने के बाद घर जाने से पहले एक पत्थर के ऊपर आ खड़ी होती थी पत्थर पर एक नाग बैठा होता था। ज्योंहि गाय आती तो वह उसके स्तनों से दूध पीने लगता था। गाय के स्वामी ब्राह्मण ने जब देखा कि शाम को गाय के स्तन दूध रहित होते हैं तो वह बहुत चकित हुआ। गाय का दिन भर पहरा करने पर भी उसको कोई पता न चला। शाम को जब

गाय को वह घर ले जाने लगा तो गाय उस स्थान पर खड़ी हो गई जहां एक पत्थर खंड पर नाग बैठा था। गाय के वहां पहुंचते ही नाग ने गाय के स्तन से दूध पीना आरम्भ कर दिया। ब्राह्मण ने उसे दूध पीते देख लिया जब नाग की दृष्टि ब्राह्मण पर पड़ी तो उसने मानुषी वाणी में कहा "ब्राह्मण जहां मैं रहता हूं वहां पर भगवान शिव का निवास है तुम राजा से कहो कि वह यहां पर एक मन्दिर का निर्माण करें।

एक अन्य कथा के अनुसार ब्राह्मण के साथ ही साथ राजा अजबरसेन को भी स्वप्न में यह आदेश सुनाई दिया कि जिस स्थान पर ब्राह्मण की गाय स्वत एक पत्थर के खंड पर दूध की धारायें छोड़ती है वहां एक मन्दिर का निर्माण करवाएं। इस प्रकार लोक चर्चा में मन्दिर बनाने की यह पूर्व भूमिका बताई गई है।"

शिव के उपासक तो सभी हो सकते हैं परन्तु शिव मन्दिर के पुजारी मात्र महन्त होते हैं। परम्परा के अनुसार महन्त अविवाहित होते थे। कालांतर में जब अनेकों शिवालयों को राजाओं ने जागीरें प्रदान कर दी व लोग श्रद्धा से काफी चढ़ावा भी चढ़ाने लगे तो कई महन्त विवाह भी करने लगे। इस प्रकार अनेकों समृद्धिशाली महन्त बन गये। परन्तु एक नियम कायम रहा। महन्त का उत्तराधिकारी उसका बेटा नहीं शिष्य ही हो सकता था। भूतनाथ की महन्ती बाद में शैव मतावलम्बियों के दशनाम अखाड़े के हाथ में सौंप दी गई। इस अखाड़े का केन्द्र प्रयागराज में है एक महन्त की मृत्यु के बाद उसके शिष्यों में से नया महन्त यहीं अखाड़ा नियुक्त करता है। भूतनाथ के वर्तमान महन्त श्री विवेकानन्द सरस्वती हैं।

मंडी रियासत के राजाओं द्वारा बनाया गया यह शिव मन्दिर सेन वंश का सर्वदा पूजनीय रहा। इस मन्दिर के निर्माण में कई वर्ष लगे होंगे। यह मन्दिर शिखर शैली का है। मंदिर गर्भगृह के ऊपर कलशमूल नीचे से अधिक विस्तृत और ऊपर की ओर चलते-चलते संकुल होता चला गया है। दीवारें सतहों में

ऊपर उठती गई है व कलशमूल में दीवारों की सब सतहें मिल गई हैं। गर्भगृह के बाहर बड़ा चौकोर कक्ष जिसमें तराशे पत्थर के बड़े-बड़े स्तम्भ निर्मित किये गये हैं के ऊपर सीढ़ीदार चौकोर छत है। इस मन्दिर का निर्माण उसी प्रस्तर खंड के चारों ओर किया गया है जहां पर कहते हैं ब्राह्मण की गाय स्वतः ही दूध की धारायें छोड़ दिया करती थी।

भूतनाथ मन्दिर के पीछे महन्तों को मृत्यु के बाद दफन करने के लिए समाधि स्थल है। मन्दिर के नाम रियासत के समय जागीर थी परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद जागीर समाप्त हो गई कुछ थोड़ी बची है। मन्दिर की भूमि की आय का काफी भाग मन्दिर में आने व ठहरने वाले सन्यासियों के खाने-पीने में खर्च किया जाता है।

भूतनाथ को मण्डी रियासत के राजाओं ने सर्वोच्च प्रतिष्ठा प्रदान थी। शैव मतावलम्बी होने के कारण राजा अजबरसेन ने शिवरात्रि को मेले का रूप प्रदान किया। तब से आज तक हर वर्ष यह मेला शिवरात्रि से अगले आठ दिन तक चलता है। शिवरात्रि की रात को सारा राज परिवार भूतनाथ मन्दिर में आकर शिव पूजा किया करता था। बाद में जब राजा सूरजसेन ने वैष्णव माता को अपना लिया और अठारह पुत्रों की मृत्यु से संतप्त होकर राजपाठ माधोराम (विष्णु) को सौंप कर स्वयं उनका प्रतिनिधि हो गया तो श्री माधोराम को भूतनाथ जाकर शिवरात्रि में सम्मान प्रदर्शित करना पड़ता था। माधोराम के अतिरिक्त मेले में आने वाले तमाम ग्राम्य देवी देवताओं को भी भूतनाथ मन्दिर आकर नतमस्तक होना पड़ता था। भूतनाथ मन्दिर से ही माधोराम व राजा उसके कर्मचारियों रक्षकों देवी देवताओं की सवारी (जलेब) मेला स्थान को जाती है। मेले सेरी चांदनी के सामने पड्डल के मैदान में (उस के बनने बाद) होते जिनमें तरह-तरह के खेल तमाशे व सांस्कृतिक कार्यक्रम होते। यह परम्परा आज तक प्रचलित है। बस राजा के स्थान पर या तो कोई राज्य सरकार का मन्त्री शोभायात्रा में चलता है या जिलाधीश इसके साथ अपने समस्त अधिकारियों

व कुछ विशिष्ट अथितियों समेत भूतनाथ मन्दिर के प्रांगण से मेला स्थल के लिए जाते हैं।

मण्डी राजवंश द्वारा निर्मित व पूजित भूतनाथ के मन्दिर की ख्याति सारे हिमाचल प्रदेश में तो है ही, परन्तु देश-विदेश का कोई भी पर्यटक दल या तीर्थयात्री दल भूतनाथ मन्दिर को देखे बिना नहीं लौटता। नगरवासियों का तो यह नित्य का पूजा व मिलनस्थल है। साधु सन्तों के कई टोले भी यहां कई-कई दिन रहते देखे जा सकते हैं।

शिव मन्दिर में हर स्थान पर पूजा पद्धति लगभग एक ही जैसी होती है शिवलिंग के ऊपर लटकते घट से बूंद-बूंद जल तले के छिद्र में डाली दूर्बाओं से टपकता रहता है। फूलों में धतूरे का फूल प्रमुख रूप से अन्य ऋतु समय के पुष्प प्रायः चढ़ाये जाते हैं। दूब भी चढ़ाई जाती है। शिवलिंग के शीर्ष श्वेत भाग में चन्दन का त्रिपुण्ड्र आलेपन भी किया जाता है। प्रातः लिंग स्नान करवा कर चंदनादि का आलेप किया जाता है। सावन के महीने में महिलायें जन्म-जन्म सुहाग प्राप्ति के लिए शिवलिंग पर परिक्रमा करके जल व विल्वपत्र चढ़ाती हैं। फागुण में गौरी तृतीया को सुहागिने व्रत रखती हैं व अटल सुहाग की कामना करती है। शिवरात्रि को भी व्रत रखा जाता है कुमारी कन्यायें सोमवार को शिव का व्रत रखती है और कामना करती है कि उनको मन चाहा सुन्दर पति प्राप्त हो। यही कारण है कि भूतनाथ के मन्दिर में युवतियों और महिलाओं की भीड़ लगी होती है।

भूतनाथ मन्दिर के प्रांगण में सुबह शाम कई सन्यासी भांग व चरस पीते देखे जा सकते हैं, वे इसे व्यसन न मानकर भोले नाथ का प्रसाद कहते हैं प्रचलित मत है कि शिव भांग, चरस, धतूरा सबका प्रयोग करते थे। वे अमृत "मंथन" के समय देवताओं के हिस्से आये सारे विष को पी गये और सहज ही पचा गये थे। हाँ उससे उनका कंठ नीलवर्ण हो गया था तभी तो वे 'नीलकंठ'

तीन फीट चौड़ी व आठ फीट ऊंची लोहे के पटों व सलाखों वाली खिड़की है।

गली से प्रवेश द्वार में जाने वाली 4 फीट लम्बी और 8 इंच ऊंची व आठ इन्च चौड़ी चार सीढ़ियां सफेद संगमरमर के तराशे पत्थर की है। प्रवेशद्वार के अगल-बगल दो-दो फीट चौड़ी स्तम्भाकार आधार शिलायें हैं। द्वार के साथ दोनों ओर सवा एक × सवा एक इन्च संगमरमर जड़ी बैठकें बनी हैं। द्वार के प्रवेश स्थान की लकड़ी की चौखट पर चांदी की पतली पत्री जड़ी हुई है जिस पर काफी बारीक मीनाकारी है। द्वार के साथ बाहर को ओर तराशे पत्थर के 4 इन्च चौड़े अथवा मोटे व 5 फीट ऊंचे स्तम्भ है। 5 फीट से ऊपर द्वार गोलाकार कटाव बनाता लगभग साढ़े तीन फीट और ऊपर उठाया गया है। द्वार के दोनों पट साढ़े तीन फीट चौड़े व साढ़े पांच फीट ऊंचे हैं। बन्द करने लिए बाहर से एक ओर से सांकल हैं तो दूसरी ओर से कुंडी।

प्रवेश द्वार के ठीक ऊपर दस फीट लम्बे आधार पर (बाहरी दीवार के ऊपर) 6-6 इन्च मोटे डेढ-डेढ इन्च दोनों ओर को 4-4 इन्च स्तम्भों पर एक मेहराबदार पालकी सीमेंट की बनी है। पालकी के बीच आगे पीछे डेढ-डेढ इन्च के खूंटे हैं। ऊपर गोलाईदार बल्कि अर्द्ध चन्द्राकार छत के बाहर की ओर लगभग डेढ इन्च पांच स्वर्णाभ कलश हैं। प्रवेशद्वार के भीतर की ओर एक बड़ा घण्टा लटक रहा है जिसे हर आता-जाता ठनकाता है। प्रवेशद्वार के भीतर बांई ओर हाथ धोने के लिए दीवार के साथ टंकी व नल है। प्रवेश द्वार व उसके आस-पास की सुरक्षा दीवार मन्दिर का पूर्वी भाग है। दक्षिण भाग में प्रवेश द्वार वाली दीवार से सटा हुआ विष्णु मन्दिर का कक्ष व उसके उत्तरी छोर में एक खुली बैठक बनी हुई है। विष्णु मन्दिर के पीछे से लगभग ढाई फीट चौड़ी गली है जो भूतनाथ की सरायें की दीवार के पास मन्दिर के दक्षिणी पार्श्व के प्रांगण में विलीन हो जाती है। भूतनाथ के उत्तरी पहलू

प्रवेश में प्रवेश द्वार वाली दीवार से सटा राधा कृष्ण मन्दिर का कक्ष है।

इन तीनों मन्दिरों का संयुक्त प्रांगण सफेद संगमरमर के दो फीट x चार फीट, ढाई फीट व पांच फीट टुकड़ों से बना है। उसका भूतनाथ के द्वार की ओर का आधा भाग 10x10 इन्च के चौकोर सफेद व काले संगमरमर के पत्थरों से खचित है और शतरंज की बिसात का भ्रम उत्पन्न करता है। भूतनाथ के बाहरी कक्ष के प्रवेशद्वार से चार फीट पूर्व में बलुआ पत्थर से अति कलात्मक ढंग से गढ़ा गया नन्दी अवस्थित है। इसे काले व अन्य रंगों से यथा योग्य पोता गया है। नन्दी की लम्बाई सवा सात फीट है अगले भाग से गर्दन के पास यह साढ़े सात फीट ऊंचा है और पीछे से साढ़े चार तक। इसके नीचे एक 10 इन्च ऊंची 4 फीट चौड़ी व 8 फीट लम्बी आधार पट्टिका है। नन्दी के गले में दानेदार घण्टी व माला है। गले के अनुभाग के नीचे पिछले खुर से आगे तक फैला हुआ दस इन्च फन उठाये सवा तीन इंच लम्बा नाग है। नाग को भी काले रंग से रंगा गया है। नन्दी की टांगो के पीछे एक मुकुटधारी गोपाल नन्दी की पूंछ अपनी टांग में दबाये बनाया गया है। गोपाल लगभग एक फीट है नन्दी के मुंह पर भी श्रृंगार है। मुंह को बांधने वाला आखों व सीगों के बीच बना एक फुट का इधर-उधर की पटियों से युक्त मुखबन्धन हैं। नन्दी की पीठ के ऊपर दोनों ओर को ढाई फीट चौड़ा लटकता लाल, हरा व काले रंग का दुशाला बना है। उसकी पूंछ के बीच माला गूंथी गई है। उपर्युक्त तीन मन्दिरों के बीच के प्रांगण का विस्तार लम्बाई में 36 फीट व 42 फीट तथा चौड़ाई में 22 व 24 फीट है।

भूतनाथ के अगले विस्तृत कक्ष का प्रवेशद्वार बाहर से पांच फीट चौड़ा है। उसके दाहिनी ओर की दीवार 12 फीट व बांई ओर की 12 फीट चौड़ी है। बाहरी लम्बाई-चौड़ाई 36x24 इन्च और कक्ष का भीतरी भाग 32 फीट x 22 फीट। कक्ष और आंगन के बीच द्वार लगभग 9 फीट है। इसके बाहरी भाग

4 इन्च चौड़े व 10 इन्च मोटे सीमेंट के सादे स्तम्भ है। इनके मूलों से लगभग एक फीट की ऊंचाई पर दोनों ओर के स्तम्भों पर 10x6 इंच के 2 लम्बे द्वारपाल हैं परन्तु जिनका पुजारियों ने टीका व रंग लगाते-लगाते रूप विकृत कर दिया है। इस भाग में 6 इन्च x 8इन्च में संगमरमर बिछा है। द्वार के दाहिने भाग में प्रांगण से 3 फीट ऊपर एक गवाकक्ष में 10 x 12 इन्च का एक द्वारपाल सम्भवतः भैरव है जिसकी मूर्ति बलुआ पत्थर से बनी हुई है व उसका सर्वांग काले रंग से पोता गया है। प्रवेशद्वार का भीतरी भाग 3 फीट चौड़ा व 6 फीट ऊंचा बिना श्रृंगार के सादे पत्थर से बना है। उसके ऊपर बीच में 8x8 इन्च का गणेश उत्कीर्ण है परन्तु अब मूर्ति अस्पष्ट हो गई है। द्वार के कपाट बहुत पुराने समय के सादे हाथ से गढ़ी गई लकड़ी के हैं। कपाट बन्द करने के लिए लोहे की पुरानी सांकल व कुंडा है।

गर्भगृह के बाहर वाले विस्तृत कक्ष में तीन पंक्तियों में कुल 12 तराशे हुए आलंकृत स्तम्भ है। मूल से चौकोर आधारों पर ऊपर उठे फिर उस से ऊपर लगभग डेढ़ फीट ब्यास की गोलाई वाले छत तक 12 फीट से 15 फीट तक ऊंचे हैं। स्तम्भ पांच फीट तक गोलाकार है तत्पश्चात पुनश्च आयताकार हो गये हैं व स्वाभाविक मोटाई से अधिक विस्तृत कर दिए गए हैं। छत को मापते समय उनका वितार काफी हो गया है।

इन स्तम्भों के ऊपरी सिरों के विस्तृत वर्गाकार व आयताकार प्रस्तर प्रखण्डों पर धनुष संधाने के लिए मुष्टिकाओं, चौकोर यंत्रों सिंह मुखों, पुष्पलता वल्लरियां का अलंकरण है। कक्ष की छत का आकार इस निर्माण से अदभुत हो उठा है। चार स्तम्भों के ऊपर मन्दिर के कारीगरों ने लम्बे-लम्बे प्रस्तर खण्डों को इस प्रकार बिठाया है कि चौकोर सीढ़ीदार उल्टी बावडियाँ बन पड़ी हैं। जहां वावड़ियां नहीं बनी हैं वहां पर लम्बे आयताकार तराशे प्रस्तर-खण्ड सीढ़ियां सी बनाते गए हैं। इस कक्ष के ऊपर बीच के भाग का आकार गोल है। उसके केन्द्र-बिन्दु में जड़े कुंडे से लोहे की एक परिपुष्ठ सांकल आठ फीट तक

झूल आई है उसके साथ एक लगभग 12-15 किलोग्राम की पीतल की घण्टी लटकी है। इसका व्यास 8 इन्च है। किसी स्तम्भ पर घुडसवार, चक्र अन्य पर किसी पर फूलों से सजित गमले तथा पान-पत्रों के समान पत्रा उत्कीर्ण हैं। इस कक्ष की गर्भ गृह के साथ की दीवार के साथ चार इन्च ऊंची व साढ़े तीन इन्च चौड़ी पट्टी पर ढाई इन्च x साढे तीन इन्च की बलुआ पत्थर से बढ़िया ढंग से तराशी गई विष्णु की मूर्ति है। मूर्ति दक्खन शैली की लगती है। लम्बा-लम्बा बल-खाता शरीर, लम्बी बाहें- चतुर्भुज-शंख, चक्र, गदा व पदम् धारण किए और वस्त्र को बाहों में लपेटे खड़े हैं। सिर पर मुकुट व मूर्ति की वाम दिशा में चरणों के पास दो द्वारपाल हैं। बाहरी कक्ष के प्रवेश द्वार के साथ भीतर की पूर्वी दीवार के साथ पार्वती व गंगा की मुकुटालंकार युक्त दो गांधार शैली की मूर्तियां हैं परन्तु इनका पत्थर गलित हो रहा है और ये सुन्दर मूर्तियां भग्न हो गई हैं।

इस कक्ष की दक्षिणी दीवार के साथ तीन विष्णु मूर्तियां हैं 6 इंच से 8 इन्च तक चौड़े व ढाई इन्च ऊंचे इनके गिर्द गोल आभा मण्डल बना हुआ है। इनके आस-पास अन्य बहुत सी आकृतियां बनी हुई हैं। उनके सिर के आस-पास पदमासन की मुद्रा से युक्त मूर्तियां हैं। सबसे ऊपर एक मूर्ति है शायद गणेश की है। विष्णु की मूर्ति के साथ साधारण गढ़ाई वाला 1 x 2 इन्च का गणेश और है। गर्भगृह के बाहर द्वार की बांई ओर 1 इन्च x सवा दो इन्च की हनुमान की सिंदूर लिपटी प्रतिमा है। एक 2 इंच x 3 इन्च की काले रंग की युगल मूर्ति है जो पहचानी नहीं जा सकती। एक अन्य मूर्ति 10 इन्च x सवा एक इन्च की है सम्भवतः यह सिंह पर दुर्गा है।

कक्ष के दक्षिणी भाग में पूर्व की ओर साढे चार इन्च x साढे चार इंच का वर्गाकार लगभग ढाई इन्च गहरा हवन कुण्ड है। एक ढोल 50x25 इन्च व्यास का व दूसरा 52x26 इन्च व्यास का है। इन पर चमड़ा चढ़ा है। कहा

जाता है कि इनमें भेखल की लकड़ी प्रयुक्त हुई है। साधारणतया इस पेड़ की इतनी मोटी व ठोस लकड़ी आजकल उपलब्ध नहीं है। भेखल के पेड़ नहीं झाड़ियां ही देखने में आती हैं। गर्भगृह से पूर्व के विशाल कक्ष का सारा फर्श सफेद संगमरमर से जड़ा हुआ है।

मुख्य कक्ष या गर्भगृह 6 फीट चौड़ा है। इसका द्वार पत्थर का है व इसके स्तम्भ 10x10 इन्च मोटे धारीदार तराशे गये पत्थरों के 4 इन्च तक है। उससे ऊपर दो द्वारपाल बनाए गए हैं। उनके ऊपर युद्धोन्मत्त हाथी हैं। उनसे ऊपर आयताकार रूप में तराशे फूल हैं उनसे ऊपर के स्तर में एक मूर्ति है। तत्पश्चात् दायीं ओर पालकी में शिव व बांई ओर पार्वती है। बांई ओर के स्तम्भमूल के पास नीचे भीतर की ओर पांच फीट पर हाथियों पर झुके 1-1 फुट के गोलाकार सिर वाले द्वारपाल हैं। उनके सिर से ऊपर की मेहराव के बाहर वाद्ययंत्रों से सज्जित गंधर्व। उसके पश्चात् बीच में तीन स्तरीय छाता तथा ऊपर की ओर को छत्र है। सबसे ऊपर की पट्टी पर दोनों ओर फूलों के गमले बने हुए हैं। बीच में गणपति व आस-पास प्रसन्न मुद्रा में स्त्री पुरुष हैं। द्वार के साथ के वाम स्तम्भ शीर्ष के दोनों ओर दो मुकुट-धारिणी नारियों की जांघें ऊपर को किए स्पष्ट मूर्तियाँ हैं।

गर्भगृह 5 इन्च x 5 इन्च का है जिसमें सफेद चिप्स बिछी हुई हैं। इसके बीचो बीच 3 इन्च x 2 इन्च की गोलाकार रजत पत्र मढी योनि बनी है। योनि के मध्य स्थान में बलुआ साधारण पत्थर का पाँच इन्च व्यास का आठ इंच ऊंचा शिवलिंग है। शिवलिंग के ऊपर पीतल के बने दो फनधारी सांप हैं जिनके शरीर पर बल पड़े दिखाये गए हैं। शिवलिंग को काला रंगा गया है। इस गर्भगृह की पिछली दीवार में अलमारी बनाकर अब उसमें सर्व श्रृंगार युक्त संगमरमर के क्रमशः दो व ढाई इन्च कद के गौरी शंकर रखे गए हैं। उत्तर वाली दीवार पर साढ़े चार फीट की ऊंचाई पर सामान धरने के लिए पत्थर की एक पट्टी बनाई गई है। दक्षिण की ओर शिवजी की आकर्षक फ्रेम जड़ी

ध्यानावस्था वाली तस्वीर है। शिवलिंग के ऊपर तीन पायों वाले एक स्टेंड पर पेंदे से छिद्रित जल से भरा घड़ा रखा होता है जिसमें कुछ दूब के तिनके फंसा कर रखे जाते हैं जिनसे बूंद-बूंद जल लिंग पर टपकता रहता है।

मुख्य-कक्ष में पूजन सामग्री के नाम पर एक सर्प सदृश 6 इन्च ऊंची बाती है व एक छः मुखी तेल-दीप है। प्रवेश द्वार पर भी 5 इंच व्यास का पत्थर का शिव है। यह द्वार लता पुष्पों, धारियों, सीपियों की आकृतियों से अलंकृत है। यह साढ़े पांच फुट ऊंचा है। उसके ऊपर बीचमें 5 इन्च x 10 इन्च का गणेश है।

आजकल शिव-लिंग के ऊपर एक पीतल की गोल बिना पेंदी की परात में डेढ़ इन्च व्यास की गागर से जल गिरता रहता है। इस कक्ष के छत के केन्द्र से भी एक घण्टी पीतल की लटकती रहती है। इस की छत भी एक दूसरे को काटते तराशे पत्थर के बड़े लम्बे-लम्बे टुकड़ों से बनी है। उसका आकार भी औंधी बावड़ी के समान है।

मन्दिर का बाहरी भाग जैसा कि पहले भी लिखा जा चुका है कि गर्भगृह के पूर्व स्थित विस्तृत कक्ष की दीवारें प्रवेश-द्वार के आस-पास 12 इन्च x 12 इन्च चौड़ी व 10 फीट ऊंची हैं। इसकी छत सीमेन्ट की है व सीढ़ीदार है। एक सीढ़ी व दूसरी सीढ़ी के बीच ढलान है। इस के आकार को लकड़ियों से निर्मित विवाह की वेदी के समान कहा जा सकता है। इस के केन्द्र में पीतल का स्वर्णाभ लगभग 8 इन्च ब्यास का दो फीट ऊंचा कलश है। कलश स्थान बाहर से लगभग 15 फीट ऊंचा है। इस कक्ष के दक्षिण पार्श्व की प्रांगण पट्टिका 26 फीट लम्बी व 10 फीट चौड़ी है। गर्भगृह के बाहर की मन्दिर की दीवार अलग बगल से 24 फीट + 24 फीट चौड़ी व पृष्ठ भाग 14 फीट है। पीछे का गलियारा 18 फीट लम्बा व 8 फीट चौड़ा है। गर्भगृह के बाहर तीनों पार्श्वों में फर्श में लगती आयताकार व गोल पट्टिकाओं की तीन स्तरों के बाद

लगभग साढ़े तीन इन्च ऊंचाई पर तीन+तीन +तीन छः फीट ऊंचे व 6 इन्च गहरे साढ़े तीन फीट लम्बे स्तम्भों के ऊपर लगभग साढ़े तीन इन्च फीट की छत वाले साढ़े तीन इंच मोटे स्तम्भों वाले मन्दिरों के प्रारूपाकार गवाक्ष हैं। उत्तर की दीवार के गवाक्ष में लगभग दस इन्च चौड़ी व एक फुट ऊंची उकड़ु बैठे हनुमान की मूर्ति है। उसके साथ ही भीतरी स्तर में एक फुट चौड़ी व दो फीट ऊंची छः सिर व बारह भुजाओं वाले कार्तिकेय की मूर्ति है। उनके हाथों में पाश, परशु, त्रिशूल, शंख तथा गदा जैसे कई आयुध हैं।

बड़े गवाक्षों के अलावा तीनों पार्श्वों में तीन-तीन फीट ऊंचे दो-दो मन्दिर प्रारूप वाले छोटे गवाक्ष हैं। इन के भी ऊपर तीन-तीन फीट के गवाक्षों में एक के बाद एक चार मूर्तियां हैं। इनमें पहली मूर्ति का पुरुष नृत्य-मुद्रा में है। दूसरी में ध्यान-मुद्रा में है, तीसरा हाथ में पाश थामे है व चौथा एक टांग ऊपर किए, वस्त्र लपेटे, दण्ड ऊपर उठाए गायक लगता है। गर्भ गृह के बाहर का भाग आधार से 12 फीट तक भी स्तरीय पट्टिकाओं से निर्मित है, कटाव दार है। वहां से ऊपर कलश मूल तक पतला होता गया है। स्तर-पट्टिकाएं भी साथ हैं। प्रांगण से कलश मूल 40 इन्च के लगभग है। कलश तक पहुंचने के लिए 12 फीट से ऊपर चारों कोनों में लगभग दो सवा दो फीट पर चढ़ने के लिए ग्यारह पदत्राण हैं (खोड्डु)।

कलशमूल में ढाई फीट मोटा इतने ही ब्यास का 40 पखुड़ियों वाला वृत्ताकार प्रस्तर से गढ़ा कमल है। उसके ऊपर दस इन्च ब्यास का लगभग तीन फीट लम्बा कलश जिस पर सोने का पानी चढ़ा बताते हैं-पीतल पर स्वर्णाभ अवस्थित है। उसके ऊपर कवर के नीचे बिजलो का बल्ब है। कहते हैं इस कलश में बहुत सोना था। एक बार इसके पुनरुद्धार के बहाने जब इस को उतारा गया तो स्वर्ण गायब हो गया और पीतल रह गई या लगा दी गई।

गर्भगृह के बाहर वाली पिछली दीवार के एक गवाक्ष में बलुआ पत्थर से निर्मित युद्ध-मुद्रा में उत्तर की ओर मुख किए और चोगा पहने कार्तिकेय की 1 इंच+2 इंच की मूर्ति है। गवाक्ष का आकार 3x3 x 3x3 इन्च मन्दिर के समान है । ये गवाक्ष एक-एक पर्त की ओट में दो-दो की संख्या में हैं व कुल आठ हैं। इन गवाक्षों से कुछ ऊपर चार गंधर्व पूर्वी (पार्श्व) दीवार में बांई ओर नृत्य व ढोलक वादन करते उत्कीर्ण हैं। इसी दीवार में धोती व चोगे में एक चतुर्मुख मूर्ति हैं जिसके हाथों में डमरू, शंख, माला व कमण्डल हैं। मूर्ति 14+26 इन्च की है। सम्भवत: यह शिव हैं। इनके अगल बगल 3x3 x 3x3 इन्च के मन्दिर-प्रारूप वाले गवाक्ष हैं। उनसे ऊपर भिन्न नृत्य-मुद्राओं में चार नर्तक हैं।

गर्भ गृह के अगले बड़े कक्ष के बाहर की दीवारों में भी मूर्तियाँ या प्रस्तर खण्डों पर उत्कीर्ण मूर्तियां हैं। इसके तीन ओर की दीवारों पर (प्रवेश-द्वार वाली के अतिरिक्त) चार-चार छोटे 3x3 इन्च वाले व एक-एक 6x6 इन्च वाला गवाक्ष हैं। तीनों दीवारों पर गवाक्षों से हट कर पांच-पांच नर्तक व वादक हैं।

बड़े कक्ष के बाहर प्रवेश द्वार के अगल-बगल भी दीवारों में मूर्तियां हैं। इसके वाम पार्श्व की भैरव मूर्ति का जिक्र पहले भी आ चुका है। इस का आकार 14x24 इन्च है। इसे काला रंगा गया है। इसकी शैली गान्धारी लगती है। इसी ओर दीवार के ऊपरी भाग में दो गंधर्व नर्तक व वादक बनाए गए हैं। द्वार के बाहर की ओर 18+18 इन्च की दो टूटी पत्थर की कुर्सियां पड़ी हैं।

प्रवेश द्वार के दाहिनी ओर एक नया सवा दो इंच x ढ़ाई इंच का गवाक्ष बना कर उसमें वैष्णव देवी की संगमरमर की मूर्ति (22x32 इन्च की) स्थापित कर दी है। यद्यपि मूर्ति में देवी ने शस्त्र व पाद से महिषासुर को दबाए रखा है परन्तु रूप में सौम्यता ही परिलक्षित है। यह मूर्ति अभी कुछ समय

पूर्व ही स्थापित की गई है। इस नव स्थापित मूर्ति के साथ ही एक अन्य मूर्ति 15x36 इन्च की बलुआ पत्थर से बनाई गई है इस मूर्ति की निर्माण शैली भी गान्धारी लगती है। मूर्ति कृष्ण की हो सकती है-गोवर्द्धन धारी की मूर्ति-सम्राटों के ताज सदृश मुकुट, धोती, माला, चीर-युक्त परिधान गोवर्द्धन ऊपर उठाए हुए।

गर्भगृह वाले बाहरी भाग के पूर्वी पार्श्व में लगभग बीच में योनिस्थ ब्रह्मा, विष्णु, महेश की मूर्ति बनी है। गोल पुष्ट चेहरों वाले और सिर पर टेढ़ी पगड़ी धारण किए। इस मूर्ति से कुछ ऊपर बनाया गया है एक शेर पूर्व की ओर मुंह किए हुए। साधारणतया मन्दिर व मूर्तियों सम्बन्धी विवरण इसके साथ पूरा हो जाता है।

भूतनाथ मन्दिर के गर्भ गृह में चिप्स बिछाना, मिट्टी के घड़े के स्थान पर पीतल का घट रखना, शिव-पार्वती की संगमरमर की मूर्तियां रखना व बाहर वैष्णव देवी की संगमरमर की मूर्ति रखना, सारे मन्दिर की दीवारों पर डिस्टैंपर व पेंट छापना और हर मूर्ति को जल से धोकर रगड़ना-मसलना कुछ ऐसे पग हैं जिनसे मन्दिर की कथित भव्यता में वृद्धि करने का प्रयास किया गया है परन्तु इससे मन्दिर व मूर्तियों की स्वाभाविक स्थिति को बहुत धक्का लगा है, रंगों व पानी के प्रयोग ने मूर्तियों की वास्तविकता नष्ट कर दी है।

मन्दिर के दाहिने बाजू में दो मंजिला चार कमरों की एक सराय है। इसका निर्माण यात्रियों व साधु-सन्तों के ठहरने के लिए किया गया था। सराय की छतें लकड़ी की व छप्पर स्लेटों का है। इस सराय के नीचे की मन्ज़िल का एक कमरा सामान रखने में उपयोग किया जाता है और एक अतिथियों के लिए कभी-कभी खोल दिया जाता है, ऊपर की मन्ज़िल में भूतनाथ के महन्त श्री विवेकानन्द भारती रहते हैं।

मन्दिर के पिछले भाग में भी चार कमरों का दो मन्जिल का मकान है। जिसके एक भाग में पुजारी परिवार रहता है। उसके एक कमरे में धर्म-संघ पुस्तकालय का बोर्ड लगा हुआ है। उसमें कुछ धार्मिक पुस्तकें रखी हैं। मन्दिर के तीसरी ओर अर्थात् उत्तरी पार्श्व में अभ्यागत साधु सन्तों का भोजन तैयार करने के लिए एक भोजन कक्ष व एक कमरा उनके सोने बैठने के लिए है। उसके साथ ही पूर्वी दीवार तक चला गया एक और कमरा बना कर उसमें बड़ा गवाक्ष बनाकर अनेकों छोटे-छोटे चकमक पत्थर के या अन्य प्रकार के शिव-लिंग तथा पीतल, कांसे आदि की छोटी-छोटी मूर्तियां रखी हैं, एक पालकी में विष्णु जी की मूर्ति है। घण्टियां शंख धूपदान वस्तुएं स्थायी प्रदर्शन के लिए रखी हैं।

मन्दिर के पीछे थोड़ा उत्तर की ओर कुछ खाली रकबा है। जिसमें कुछ पेड़ पौधे भी हैं महन्तों का समाधि स्थल है। परम्परा के अनुसार मृत्यु के बाद महन्तों को मिट्टी दी जाती है। उनका शव जलाया नहीं जाता। महन्तों को केश रखने की भी आज्ञा नहीं है। वे हमेशा रुण्ड-मुण्ड रहते हैं। उनके सिर पर चोटी भी नहीं रहती। इस समाधि स्थल में दिवंगत दो महन्तों की समाधियां बनी हैं। समाधियों के ऊपर सीढ़ीदार चौकियां सी बनाई गई हैं और उनके ऊपर साधारण बलुआ पत्थर के योनिस्थ दो छोटे-2 शिवलिंग बनाए गए हैं।

इसी समाधि क्षेत्र में एक स्थान पर बैठक बनाई गई है। वहां रखे प्रस्तरखण्डों में जिनमें 3 x 3 इन्च के एक खण्ड पर पर योनि में त्रिदेव, (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) उत्कीर्ण हैं। इस के बाहरी भाग में सिंहमुख बनाया गया है इसके साथ ही तीन देवियों की छोटी सी मूर्ति है। देवियाँ हाथ जोड़े दिखाई गई है। एक अन्य मूर्ति में ध्यान मग्न शिव हैं। समाधि स्थल के तीन ओर नगर वासियों के ऊंचे-ऊंचे कई मन्जिलों के व कुछ पुराने किस्म के मकान हैं। यह समाधि स्थल पक्की दीवार से भी घिरा है। समाधि स्थल में कोई नहीं जाता और वहां पर

भययुक्त शान्ति छाई रहती है बस यहां महन्त और सन्यासी कभी दिवंगत महन्तों की चर्चा करते हैं।

महन्त तो समूचे शिव मन्दिर की सम्पत्ति का स्वामी व रक्षक है परन्तु प्रातः-सायं की पूजा करने के लिये एक स्थायी पुजारी व पुजारिन हैं। इस मन्दिर को भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग ने सुरक्षा योग्य सम्पत्ति घोषित कर रखा है। यहाँ पर पहरा भी रहता है परन्तु फिर भी पूजा पद्धति के प्रभाव में कई सुन्दर व प्राचीन ऐतिहासिक मूर्तियां नष्ट हो रही हैं विशेष रूप से गंगा व पार्वती की मूर्ति। रंगों के लेप से भैरव व हनुमान की मूर्तियां विकृत होती जा रही हैं।

जहां तक पूजा पद्धति के विवरण का प्रश्न है-शिवपूजा में जल, धतूरा पुष्प व बिल्वपत्र के साथ दूर्वा पतियां चढ़ाई जाती हैं। श्रद्धालु मिष्ठान भोगादि भी लगाते हैं। जल-दुग्ध से भी स्नान करवाते हैं। पूजा व व्रत से कुमारियों को उत्तम वर व सधवाओं को चिर दाम्पत्य सुख व बिधवाओं को अगले जन्म में स्थायी दाम्पत्य सुख का आशीर्वाद मिलता है।

एक परम्परा यह भी प्रचलित रही है कि जिस वर्ष गर्मियों में जेठ महीने में वर्षा न हो तो लोग गागरें भर-भर कर पानी लाकर शिवलिंग पर डालते जाते हैं और जब वहां से चलता हुआ पानी ब्यास नदी के जल में जा मिलता है तो उसके कुछ देर बाद वर्षा हो जाती है। इस आशय की कथाएं बराबर सुनाई जाती हैं।

महन्त श्री विवेकानन्द भारती के कथनानुसार भूतनाथ दशनाथ श्री शम्भु, पंचजूना अखाड़ा, काशी की एक गद्दी है। राजा अजबर सेन के समय में सन् 1527 ईस्वी में ही इस अखाड़े द्वारा स्वामी शांतानन्द की नियुक्ति की गई थी। इनकी जानकारी में अब तक आठ महन्त हुए हैं।

1. स्वामी गजराज भारती
2. महन्त ब्रह्मानन्द भारती
3. महन्त गजराज भारती
4. महन्त परमानन्द भारती
5. महन्त शिवचरण भारती
6. महन्त सांई भारती
7. महन्त गिरजानन्द भारती
8. महन्त विवेकानन्द भारती (ये आजकल महन्त हैं।)

मन्दिर के पृष्ठ भाग में महन्त श्री शिवचरण भारती व श्री सांई भारती की समाधियां हैं।

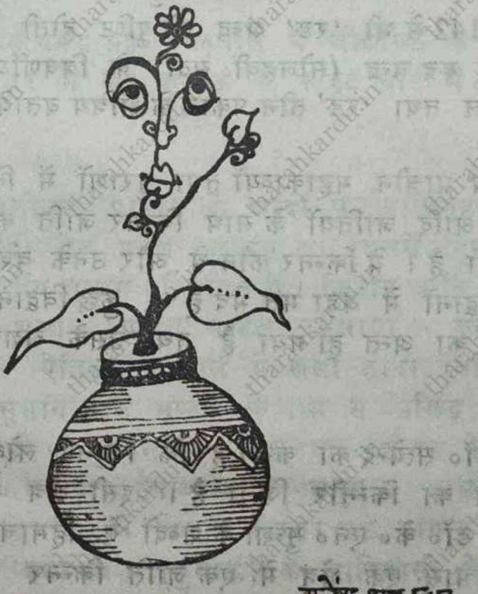

tharahkardu.in

रङ ही किन्नर तो नहीं?

हयात फकलियाल

उत्तर प्रदेश के पिथौरागढ़ जिले के सीमान्त क्षेत्र के निवासी तथा आदिवासी 'रङ' हैं जिन पर इ० टी० एटकिन्सन ने 1882-84 में भोटिया नाम थोप दिया था। इसी जाति के सुनपती सौकार की प्रसिद्धि के साथ कुमाऊनी बन्धुओं ने उन्हे सौकार शब्द से पुकारना शुरू किया। यही सौकार शब्द से 'र' का लोप हो जाने से सौका, शौका या शौक कहलाने लगे, जब कि ऋग्वेद 7/6/3 तथा 8/64/2 में पणि शब्द के साथ 'रं' शब्द का स्पष्ट उल्लेख है तथा पाणिनी के अष्टाध्यायी, स्कन्द पुराण तथा दया द्विवेदा की नीतिमंजरी, 142 से भी 'रङ' शब्द की पुष्टि होती है। कुमाऊं के चन्द राजा रूद्र चन्द्र (सोलहवीं सदी) के 'त्रिवर्णीय निर्णय' में राजन्य, वृषल तथा 'रङ' तीन प्रकार के क्षत्रिय बताये गए हैं।

भारतीय प्राचीन महाकाव्यों तथा पुराणों में किरात, नाग, यक्ष गन्धर्व आदि जातियों के साथ किन्नर जाति का बार-बार उल्लेख मिलता है। ये किन्नर कौन थे और उनके वंशज अब कौन हैं, इस पर विद्वानों में बड़ा मत भेद है। कुछ विद्वानों के अनुसार किन्नर जाति का अन्त हो गया है तथा उसके वंशज अब शेष नहीं है।

लेकिन डॉ० सत्येन्द्र का कथन है कि किन्नर लोक का क्षेत्र हिमाचल प्रदेश का किन्नौर जिला है। इसी क्षेत्र के निवासी किन्नर है।[1] डॉ० के० एन० मुन्शी के शब्दों में 'हिमाचल प्रदेश के खस क्षेत्र के पास एक क्षेत्र में एक जाति किन्नर रहती है।'[2] डॉ० बंशीराम शर्मा के अनुसार 'वर्तमान हिमाचल सरकार ने इस जिले का किन्नौर नाम रखा है। वह निश्चय ही किन्नर शब्द

के निकट बैठता है।'[3] डॉ० पद्म चन्द्र कश्यप भी लिखते हैं कि 'हिमाचल प्रदेश में ही एक ऐसा क्षेत्र है जहां किन्नर मौजूद हैं। प्रदेश के पूर्वी और उत्तरी सीमा पर किन्नौर से लाहुल स्पिति तक इनका निवास माना जाता है। किन्नरों के साथ-साथ उनके सहजातीय बन्धु नाग भी इस प्रदेश के आदिवासियों में थे।[4]

डॉ० गोविन्द चातक के मतानुसार 'यक्ष, किन्नर, नाग तथा किरात गढ़वाल के आदिवासी रहे हैं।'[5] डॉ० हरिदत्त भट्ट 'शैलेश' ने भी लिखा है कि 'प्रागैतिहासिक काल में गढ़वाल मुख्यतया यक्ष, किन्नर, नाग व किरातों से सम्बन्धित रहा है। इनके सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियां तथा दन्त कथायें मिलती है।'[6]

राज शेखर के काव्य मीमांसा से ज्ञात होता है कि 'कार्तिकेय नगर किन्नरों के मधुर गान की ध्वनियों से गुंजरित है।...... उनकी राजधानी कार्तिकेय नगर है।'

(कार्तिकेय नगर पहले गढ़वाल में जोशीमठ के पास स्थित था। कालान्तर में यह कुमाऊं के कत्यूट घाटी में स्थानान्तरित किया गया)

डॉ० त्रिलोजन पाण्डेय के शब्दों में प्रागैतिहासिक काल में यह (कुमाऊं) मेरू प्रदेश का अंग था जिसमें हिमालय के कुछ अन्य निकटवर्तीय भूभाग सम्मिलित थे। किरात जाति की प्रधानता होने पर यह भूभाग किरात मण्डल कहलाया। कुमाऊं इसी के अन्तर्गत था। ऐतिहासिक काल में खसों द्वारा विजित होने के कारण यह भूभाग खस मण्डल के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस के पूर्व किन्नरों की मुख्यता के कारण यह किन्नर देश भी कहा गया।'[7] डॉ० उर्वादत्त उपाध्याय के अनुसार 'प्राचीन काल में इस भूभाग (कुमाऊं) में किरात, किन्नर यक्ष, नाग व खस जातियां रहती थीं, ये इसी प्रदेश (कुमाऊं) के आदिवासी थे।'[8]

डॉ० एस० एम० अली ने भी लिखा है कि 'किन्नरों के पौराणिक

वर्णन आधार पर हम यह कह सकते हैं कि उनका हिमालय के बहुत बड़े क्षेत्र पर अधिकार था।' द ज्योग्राफी आफ दा पुरानाज पृष्ठ-५५

डॉ० राधा कृष्ण कंचन के शब्दों में 'किरात समुदाय के हिमालय पर रहने वाले ही गन्धर्व व किन्नर कहे जाते थे जो संगीत के बड़े शौकीन थे।'[9] महापंडित राहुल सांकृत्यायन के अनुसार भी 'किन्नर के लिए किम्पुरुष शब्द भी संस्कृत में प्रयुक्त होता है। ...... पहले कनौर या किन्नर क्षेत्र बहुत विस्तृत था। कश्मीर से पूर्व नेपाल तक सारा ही पश्चिमी हिमालय तो किन्नर जाति का निवास था। ... किसी समय किम्पुरुष वर्ण सारे हिमालय का नाम रहा होगा।........ किन्नर जाति का सब से पुराना स्तर है किरात।........ किसी समय सारा हिमालय प्राचीन किन्नर भाषा (किरात) बोलता था।'[10] डॉ० बंशीराम शर्मा के शब्दों में भी 'यह (किन्नर) जाति हिमालय के बहुत बड़े भाग में निवास करती थी।[11] डॉ० हरिराम जसटा भी लिखते हैं कि 'प्रागैतिहासिक काल में किन्नर, किरात व नाग ही हिमालय के आदिवासी रहे होंगे।[12]

पुन: डॉ० बंशीराम शर्मा लिखते हैं कि संस्कृत ग्रन्थों के अनुसार 'ये (किन्नर) लोग मंगोल जाति से सम्बन्धित बताये जाते हैं।[13] डॉ० रघुनाथ सिंह के अनुसार भी 'मंगोल तथा आर्य रक्त मिश्रण के कारण उन (किन्नरों) के रूप रंग में अन्तर पड़ता गया। मंगोल जाति के मुख पर बाल नहीं होते। प्राचीन काल में उनके स्त्री-पुरुषों का परिधान तथा सिर के बाल समान होते थे तो उनकी आकृति से पहचानना कठिन हो जाता था कि कौन स्त्री कौन पुरुष है? इस कारण किम्+नर तथा किम्+पुरुषः से किन्नर तथा किम्पुरुष शब्दों की उत्पत्ति हुई।[14]

डॉ० सिंह ने किन्नरों में मंगोल और आर्य रक्त मिश्रण की बात लिखी है, दिल्ली विश्वविद्यालय के एक शोध छात्र द्वारा वर्ष १९७७ में किए गए मानव शास्त्रीय वैज्ञानिक अध्ययन

रक्त मिश्रण के आधार पर पिथौरागढ़ (कुमाऊं) की रङ जाति में मंगोल व खस का रक्त मिश्रण पाया गया था। खसों को कुछ विद्वान आर्य नहीं मानते और कुछ आर्य मानते हैं। यदि खस आर्य हों तो कुमाऊं के रङ हिमाचल के किन्नरों में पर्याप्त रक्त समानता भी है।

डॉ० सिंह के ही शब्दों में 'किन्नर जाति शंकर पूजक मानी गई है वे शिव की सेवा करते थे। कैलाश तथा उसका समीपस्थ क्षेत्र किन्नरों का मुख्य निवास था। यक्षों व गन्धर्वों के समान यह गायक व नृत्यशील जाति थी। किम्पुरुष व किन्नर भाषा में आर्य और तिब्बती भाषा का भी मिश्रण है। किन्नरों का निवास क्षेत्र निश्चित रूप से हिमालय प्रदेश में है। उनकी भाषा में 'सू' या 'शू' देवता वाचक शब्द हैं।'[15]

डॉ० सिंह की उपरोक्त बातें कुमाऊं की रङ जाति पर पूर्ण रूप से लागू होती हैं। रङ बोली में देवता को 'सै' कहते हैं, हिमाचल प्रदेश में महासू, उत्तर काशी में धरासू व बंगासू, चमोली में लंगासू तथा पिथौरागढ़ में छिलासू स्थानों के नाम हैं। श्री राहुल 'सू' या 'शू' शब्द को मूल किराती शब्द मानते हैं।'[16]

किन्नरों की महाकाव्यों तथा पुराणों में क्यों इतना महत्व दिया गया? डॉ० बंशीराम शर्मा के अनुसार 'हिमालय की पवित्रता के कारण यहां निवास करने वाले प्राणी भी श्रद्धास्पद बन गए और पुराणकारों ने उनके सम्बन्ध में अनेक चमत्कारिक वर्णन प्रस्तुत किए है।'[17] भीम ने महाभारत शान्ति पर्व में कहा है कि 'किन्नर बहुत सदाचारी होते हैं'। युधिष्ठिर के अंग रक्षकों में उनकी सत्य निष्ठा तथा विश्वसनीयता के कारण किन्नर भी होते थे। डॉ० पद्म चन्द्र कश्यप के अनुसार 'वे (किन्नर) साधु स्वभाव के थे।[18]

लेखक का मत है कि नाग, यक्ष, किन्नर, गन्धर्व आदि सब विशाल किरात भण्डार से निकले हैं तथा विकसित हुए हैं। नाग

सत्ता लोलुप तथा युद्धप्रिय, यक्ष, धनाधीश, गन्धर्व, संगीत प्रेमी तथा किन्नर सामान्य प्रजागण थे, किन्तु किन्नर भी नृत्य गीत में पर्याप्त रूचि लेते थे। मधुर कण्ठी को अब भी किन्नर कण्ठी कहा जाता है। किन्नरों ने अपनी संस्कृति मानवता और नैतिकता का इस सीमा तक विकास कर लिया था कि वे आर्यों के श्रद्धास्पद व आस्था एवं सम्मान के पात्र हो गए।

हालांकि पी. थोमस के शब्दों में 'उन (नाग व किन्नरों) के आचार विचार सम्बन्धी अपने नियम थे। मनु के नियम उन पर लागू नहीं होते थे।'[19] डॉ० कश्यप के अनुसार भी 'किन्नर तथा नाग हिमालय में वास करने वाली प्रागैतिहासिक जातियाँ थीं जिनके सामाजिक नियम आर्यों से भिन्न थे। किन्नरों के साथ उनके सजातीय नाग भी इस प्रदेश के आदिवासियों में थे।'[20] डॉ० हरिराम जसटा भी लिखते हैं कि 'सिन्धु घाटी की सभ्यता के अन्तिम चरण तक हिमाचल क्षेत्र में नाग नामक एक जाति निवास करती थी जिसकी जातीय विशेषतायें किन्नर तथा किरात जाति के सदृश्य थी।'[21]

सैवैटिनों मौसकैटी के शब्दों में 'किन्नर तथा साक्य (शाक्य) जातियों के सन्बन्ध में कहा जा सकता है कि ये एक ही वंश से उत्पन्न हुई थीं। एनार्शयन्ट सैमेटिक सिवित्नाइजेश पृष्ठ-६०।

हिमाचल प्रदेश के किन्नौर जिले को ही किन्नरों का केन्द्र बिन्दु मान भी लें तो भी लद्दाख में रोंगपा, लाहुल स्पिति में रङ किन्नौर के पूह तहसील में रङ, उत्तर काशी में रंगवाल तथा रंगड़, चमोली के माणा घाटी में रङपा व नीती घाटी में सेङ तथा पिथौरागढ़ जिले के धारचूला तहसील में रङ रहते हैं। पिथौरागढ़ में जोहार घाटी के पंचज्वारी बरपटिये (जेठरा भोटिया) तथा दानपुर (अलमोड़ा) तथा मुनस्यारी (पिथौरागढ़) के हरकोटी भी रङ मूल के हैं जो कभी रङ कस बोली बोलते थे।

अब किन्नौर के किन्नर रङ लोगों की परम्पराओं की समानताओं को बहुत संक्षेप से लें :—

किन्नौर में पर्वत शिखरों पर चबूतरे (कोटङ, शेखार या शकरी) पूर्वजों की याद में बनाये जाते हैं जैसे कि रङ क्षेत्र में यहाँ मन्थङ, श्यन आदि बनाये जाते हैं। इनमें श्वेत ध्वज चढ़ाने की प्रथा भी समान है। किन्नौर का तोशिम तथा रङ क्षेत्र का रमाचिम (रमवङ) में पूरी समानता है जो अविवाहित युवक-युवतियों का सदाचार, शिष्टाचार, नैतिकता और समाजिकता की शिक्षा का केन्द्र होता था। प्राचीन काल में इस केन्द्र का शैक्षिक सांस्कृतिक, विकासात्मक, सूचनात्मक तथा राष्ट्रीय महत्व था। पिथौरागढ़ के जोहार क्षेत्र का प्राचीन रङबङ (मदनोत्सव) और किन्नौर का रङ कोरङचिम में पूर्ण साम्य था, जब अविवाहित युवक-युवतियां देव पूजा के नाम से पर्वत शिखरों में जाते थे। इस प्रकार एक दूसरे से जान-पहचान बढ़ाते थे, किन्नरों में मेशुर एक सार्वभौम देवता है जब कि यहां मिहिर मेशुरू एक प्रभाव शाली व्यक्ति हुआ। देवी-देवताओं में आपसी रिश्तेदारी की मान्यता दोनों क्षेत्र में समान रूप से प्रचलित है। वहां नाग देवताओं की संख्या अधिक है और यहाँ अपेक्षाकृत कुछ कम है। वहां वार्षिक त्यौहार सन्थङ (देव प्राँगण) में पूजा सहभोज और गीत-नृत्य की प्रथा है तो यहाँ भी वार्षिक त्यौहार स्यंठ में बहुत कुछ इसी प्रकार का आयोजन होता है। (सम्भवत: 'सन्थङ व स्यंठं' एक ही मूल शब्द से निकलते हैं।)

विवाह प्रथा में वहाँ का जनेकङ व यहां के थोची में साम्य है जिसमें वर पक्ष कन्या पक्ष के यहां मंगनी के लिए जाते हैं। कन्या पक्ष द्वारा तिथि दिए जाने पर वर पक्ष बारात लेकर जाता है तथा कन्या पक्ष पगड़ी, धन, मांस, मदिरा, पूरी धलं ऋग्वैदिक करम्भ आदि देने की प्रथा भी समान है। वहां का दमचलशिश और यहां का 'चाल्वू दीम' प्रथा भी एक सी है जिसमें युवक युवति प्रेमवश विवाह हेतु भाग जाते हैं। बल पूर्वक विवाह हेतु कन्या का अपहरण वहाँ दारोशडबडब और यहां श्यीम कहलाता था जो अब समाप्त हो गया है। विवाहिता द्वारा पुर्नविवाह

करने पर पूर्व पति को देय विवाह व्यय को वहाँ हारी तथा यहां क्वल्ती (kwalti) च्यैम कहा जाता है। बहू को वहां नमशा और यहाँ नमश्या कहते हैं।

हिमाचल के किन्नरों का परलोक रल्डङ तथा रङ लोगों का परलोक क्षंलिन ग्बी पाट् कैलास के पास ही है। दोनों के मृत्यु संस्कार में शोक, निर्देश तथा मार्ग दर्शन के गीत गाए जाते हैं, जिसको वहां गितकारेङ गीथङ तथा यहां सैहयाम या अमर्हीम कहते हैं, देव पूजा तथा पितर पूजा की विधियां और सामग्रियां समान हैं। प्रेत मार्ग दर्शक श्वेत वस्त्र वहां आम काफरा तथा यहां अम लुगड़ा कहलाता है। दोनों क्षेत्रों में खाद्य सामग्री मृतक आत्मा के प्रतीक कौवे द्वारा खाये जाने का विश्वास तथा मान्यता भी समान है। केदार, बद्रीनाथ, कृषि देवता, सिद्ध बन देवी, जल देवी, चन आदि की पूजा दोनों क्षेत्रों में प्रचलित है।

सतलुज घाटी किन्नौर से जुड़े हुए निर्मण्ड क्षेत्र तथा सराहन में हर बारहवें वर्ष भूण्डा पर्व मनाया जाता है। इस अवसर पर हिवणी देवी की पूजा होती है। रङ क्षेत्र में बारह वर्षीय कंडाली महापर्व का आयोजन होता है। इसी वर्ष ग्राम सीप् के रङ लोग बारहवें वर्ष में चन्दा देवी की पूजा करते हैं। पिछली बार भूण्डा १९८१ में और कंडाली १९८७ में सम्पन्न हुए। दोनों पर्वों में छः वर्ष का अन्तराल है।

उपरि किन्नौर में बौद्ध धर्म का प्रचार तथा बहुपति विवाह प्रथा है। किन्तु मध्य व निचले किन्नौर में रङ जाति की ही तरह एक पत्नी विवाह की प्रथा तथा अनेक देवी-देवताओं की पूजा का प्रचलन है।

नारी सम्मान, नारी स्वाभिमान, उनका आत्म विश्वास, आत्मनिर्भरता तथा घोर परिश्रम दोनों समाज में विद्यामान है पानी में उबाला हुआ फीका हलवा दोनों क्षेत्र में दू, खाजा (खीलू) को वहां पुग तथा यहाँ प्वू, साग को वहां स्कन और

यहां कन कहते है। इसी प्रकार अभी तक लेखक को २६५ शब्द किन्नर बोली के मिल पाए हैं जो रङ बोली से समानता रखते हैं। अभी अध्ययन जारी है।

ऐसा प्रतीत होता है कि आदि कवि बाल्मीकि वानरों तथा किन्नरों को ठीक-ठीक पहचान नहीं पाये। रामायण के किष्किन्धा कांड के चौदहवें सर्ग के १६वें श्लोक के अनुसार 'श्री राम की यह बात सुनकर सुवर्ण के समान पिंगल वर्ण वाले सुग्रीव ने आकाश को विदीर्ण सा करते हुए कठोर स्वर में बड़ी भयंकर गर्जना की।'

१६वें सर्ग के १४वें श्लोक में भी लिखा है कि 'इतने में ही श्रीमान वाली ने सुवर्ण के समान पिंगल वर्ण वाले सुग्रीव को देखा।'

इसी कांड के ३७वें सर्ग के दूसरे व तीसरे श्लोक के अनुसार महेन्दु, हिमवान, विन्ध्य, कैलास तथा श्वेत शिखर वाले मन्दराचल इन पांचों शिखरों में जो श्रेष्ठ वानर रहते हैं, पश्चिम दिशा में समुद्र के तट पर प्रातःकालिक सूर्य के समान कान्तिवान और नित्य पर्वतों पर बानरों का निवास है।

छठे श्लोक में दिया है 'मेरु पर्वत के आस-पास रहने वाले जो सुवर्ण की सी कान्ति वाले वानर हैं।'

२१वें श्लोक के अनुसार 'जिनकी कान्ति तपाये हुए सुवर्ण के समान थी, वहां से किष्किन्धा के लिए चल पड़े।'

४३वें सर्ग के ३७वें श्लोक में दिया है 'उस प्रदेश को लांघ कर आगे बढ़ने पर शैलोदा नाम वाली नदी का दर्शन होगा। उसके दोनों तटों पर कीचक बाँस (वेणु) हैं'। यह बात प्रसिद्ध है।

३८वें सर्ग में दिया है 'ये बांस ही सिद्ध पुरुषों को शैलोदा के उस पार ले जाते हैं और वहां से इस पार ले आते हैं, जहां केवल

पुण्यात्मा पुरुषों का वास है व उत्तर कुरु देश शैलोदा के तट पर ही है'।

४६वें श्लोक के अनुसार 'वहां (उत्तर कुरु देश में) सूर्य के समान कान्तिमान गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध, नाग और विद्याधर सदा नारियों के साथ क्रीड़ा विहार करते हैं।'

आदि कवि उत्तर काण्ड के ग्यारहवें सर्ग में मुनिवर विश्रवा अपने धनद पुत्र कुवेर से ४१वें श्लोक में कहलाते हैं कि 'महावाहो! अब तुम अनुचरों सहित लंका छोड़ कर कैलास पर्वत पर चले जाओ और अपने रहने के लिए वहीं दूसरा नगर बसाओ।'

पुनः४३-४४वें श्लोक में विश्रवा कहते हैं कि 'उस (कैलाश) पर्वत पर देवता, गन्धर्व, अप्सरा, नाग और किन्नर आदि दिव्य प्राणी, जिन्हें स्वभाव से ही घूमना-फिरना अधिक प्रिय है, सदा रहते हुए निरन्तर आनन्द का अनुभव करते हैं'।

रामायण की उपरोक्त पंक्तियों पर विचार करें। किष्किन्धा काण्ड में सुग्रीव को पिंगल वर्ण का बताया है। इस बात से यह कहा जा सकता है कि ये वानर जातियां मंगोल वर्ण की थीं। सभी वानर स्वर्ण वर्ण के थे'।

दूसरे इसी काण्ड में हिमवान व कैलास के निवासियों को भी वानर ही कहा गया है जबकि उत्तर काण्ड में कैलाश में किन्नरों का भी वास होना लिखा है।

प्रातःकालिक सूर्य के समान कान्ति वाले वानरों से यह संकेत मिलता है कि वे आस्ट्रोलायड तथा मंगोल जाति के मिश्रण और ताम्रवर्णी थे।

मेरु पर्वत के वानर सुवर्ण सी कान्ति वाले यह ठीक प्रतीत होता है। डॉ० मदन चन्द्र भट्ट ने मेरु पर्वत को वर्तमान नन्दा

देवी पर्वत शिखर के रूप में पहचाना है।[22] इसकी तलहटी में स्थित १५० परिवार वाला गाँव कत्तौल में आज भी मंगोल वर्णी लोग रहते हैं।

डॉ० भट्ट शैलोदा को शारदा नदी मानते हैं जिसका उपरली नाम काली नदी है। इस प्रकार उत्तर कुरु देश वर्तमान रङ क्षेत्र में स्थित प्रतीत होता है जहां पर आदि कवि ने किन्नरों के भी निवास का उल्लेख किया है।

महाभारत में दिग्विजय पर्व के अनुसार भी 'अर्जुन श्वेत गिरि को लांघ कर करद्रुम पुत्र के द्वारा सुरक्षित किम्पुरुष देश में गए जहां किन्नरों का निवास था। इसके पश्चात् उसने हाटक देश में आक्रमण किया और गुह्यकों को समझा बुझा कर वश में कर लिया। हाटक देश पर आक्रमण करने के बाद अर्जुन ने गन्धर्व देश को भी जीत लिया। उसके पश्चात् नागों के देश पर अधिकार करके मानसरोवर पहुंचा।[23]

अमर कोष ह/९९ के अनुसार—
विद्याधराप्सरोययक्षारक्षो गन्धर्व किन्नरः।
पिशाचो गुह्यकः सिद्धो भूतोऽमी देवयोनयः।

आर्य लेखकों ने यहां पर किन्नरों को भी देव योनि का माना है। पूर्वी अरुणाचल में रांग बाबरांग, मेघालय में रांगराम दारमा में लारोङ व रङचिम तथा किन्नर शीशेरिङ व मकारिङ नामक देवता भी पूजे जाते हैं।

श्री मद्भागवत पुराण ४/६/९ के अनुसार 'जना, औषधि, तप, मंत्र, योग आदि सिद्धियों को प्राप्त करने के बाद मनुष्यों को कैलास वास का सुख मिलता है। यह स्थान किन्नर, गन्धर्व और अप्सराओं से सदैव आवेष्टित रहता है।'

वेरीडेट कीथ के शब्दों में 'गन्धर्व, किन्नर तथा अप्सराएं मानसरोवर झील तथा निशाध पर्वत के पास रहते हैं'।[24]

आज भी कैलास व मानसरोवर तीर्थ यात्रा का निकटतम व सरलतम मार्ग रङ क्षेत्र से होकर माना गया है। इस का रङ व किन्नरों के सन्दर्भ में भी महत्व है।

कृषि रक्षा रङ अनुष्ठान 'मील्ब् थ्यीम' के कथानक से ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में रङ कैलास मानसरोवर के पास की भूमि में निवास व कृषि कार्य करते थे। कुछ गोत्र वहां से परवर्ती काल में वर्तमान रङ क्षेत्र में आकर बसे भी थे। पश्चिमी तिब्बत के ग्बूकुङ चबरङ से आज भी कुछरङ तथा हिमाचल के किन्नर अपना सम्बन्ध जोड़ते हैं।

इन विवरणों से रङ जाति के किन्नर होने में सन्देह शेष नहीं रह जाता। फिर भी रङ किन्नर है या नहीं, इस का निर्णय लेखक सुधी व विवेकशील पाठकों पर छोड़ता है।

सन्दर्भ

1. किन्नर लोक साहित्य की भूमिका—पृष्ठ 3
2. आर० एन० सक्सेना, सोशल एकोनोमी ऑफ़ ए पोलियस्टडर्स पीपुल में डॉ० कन्हैया लाल, मणिक लाल का प्राक्कथन—पृष्ठ 5-13
3. किन्नर लोक सहित्य—पृष्ठ 3
4. हिमाचली संस्कृति का इतिहास—पृष्ठ 72
5. मध्य पहाड़ी का भाषा शास्त्रीय अध्ययन—पृष्ठ 20
6. गढ़वाली भाषा और उसका साहित्य—पृष्ठ 2
7. कुमाऊं का लोक साहित्य—पृष्ठ 42
8. कुमाऊं की लोक गाथाओं का साहित्यिक व सांस्कृतिक अध्ययन—पृष्ठ 43
9. दिनांक 3-10-85 का पत्र
10. किन्नर देश—पृष्ठ 291—292
11. किन्नर लोक साहित्य—पृष्ठ 30
12. भारत में नाग पूजा व परम्परा—पृष्ठ 84
13. किन्नर लोक साहित्य—पृष्ठ 11।
14. कल्हणकृत राजतरंगिणी (परिशिष्ट ढ)—पृष्ठ 110

15. उपरोक्त—पृष्ठ 113
16. किन्नर देश—पृष्ठ 292
17. किन्नर लोक साहित्य—पृष्ठ 6
18. हिमाचली संस्कृति का इतिहास—पृष्ठ 72
19. इपिक्स, मायथस एन्ड लीजेन्डस ऑफ इण्डिया—पृष्ठ 43
20. कुल्लुई लोक साहित्य (मूल प्रति शोध प्रबन्ध)—पृष्ठ7-8
21. भारत में नाग पूजा व परम्परा—पृष्ठ 84
22. संस्कृति (जुलाई-सितम्बर 1985)—पृष्ठ-71
23. किन्नर लोक साहित्य—पृष्ठ 9
24. द माइथोलोजी ऑफ ऑल रेस जिल्द 6—पृष्ठ 143

●

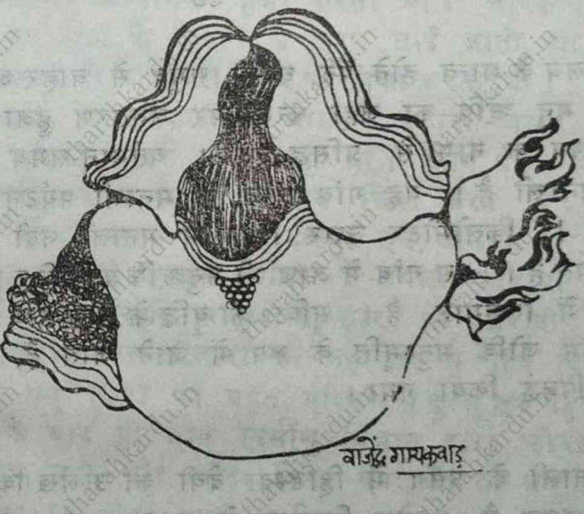

मनाली का इतिहास

उधोराम अवस्थी

महाप्रलय के उपरान्त त्रिविष्टप में जब मारकण्डेय ऋषि एक वट वृक्ष पर बैठकर प्रलय का दृश्य देख रहे थे अचानक उन्हें बहुत दूर वट वृक्ष के पत्ते पर भगवान विष्णु बालरूप धारण किए हुए अपनी ओर आते दिखाई दिये। ऋषि ने उन्हें प्रणाम किया। भगवान् को साक्षात् सामने देख कर ऋषि के मुख से यह श्लोक निकला।

करारविन्दं पदारविन्दं मुखारविन्दं विनिवेशयन्तम्।
वटस्य पत्रस्य पुरेश्यानं बालं मुकुन्दं शिरसा नमामि ।।

प्रलय के शान्त होने पर धरती समुद्र से बाहर आती गई। स्वयंभू मनु ऋषि का जहां धरती पर अवतरण हुआ वह स्थान मनु-आलय के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वर्तमान समय में इसका नाम मनाली है। यह गांव आज के मनाली पर्यटन स्थल से लगभग $1\frac{1}{2}$ किलोमीटर उत्तर दिशा में मनाली नदी के उस पार स्थित है। इस गांव में आज भी मनुऋषि का मंदिर जीर्ण-शीर्ण हालत में विद्यमान है। सृष्टि की वृद्धि के साथ-साथ मानवधर्म के नियम जोकि मनुस्मृति के रूप में जाने जाते हैं, को यहीं पर लिपिबद्ध किया गया।

मनाली के प्रसंग में हिडिम्बा देवी का उल्लेख किया जाना भी आवश्यक है। लोक विश्वास के अनुसार लाक्षागृह से बच निकलने के पश्चात् पांडव मनाली आए, जहां हडिम्ब नामक दानव के साथ भीम का युद्ध हुआ और उसको मारने के बाद

उसकी बहिन हडिम्बा से भीम ने विवाह किया। हडिम्बा से भीम को घटोत्कच नामक बलशाली पुत्र की प्राप्ति हुई। पांडवों के वहां से चले जाने के बाद हडिम्बा काली माता की घोर तपस्या में लीन हो गई और उसने दैव शक्तियां प्राप्त कीं। मनाली के ढुंगरी नामक गाँव में हडिम्बा का मन्दिर है जिसमें वह विशाल शिला के रूप में विराजमान है, जिसकी पूजा आज भी की जाती है। दानव वध के कारण मनाली का नाम दाना-बाज़ार भी काफी समय तक प्रसिद्ध रहा। पंजाब के व्यापारी घोड़े-खच्चरों पर चाय, तम्बाकू गुड़, नमक आदि खाद्य सामग्री लाद कर तिब्बत तथा चीन के इलाकों को ले जाते थे। यहां पर एक दो दिन का पड़ाव डालते थे। वापसी पर दशहरे से एक दो सप्ताह पूर्व तिब्बत, चीन आदि के इलाकों से ऊन, पश्म, नमदे, गलीचे, सूखे फल, भेड़-बकरियां लाकर यहां के खुले मैदान में 10-12 दिन उनका विक्रय कर आगे बढ़ते थे। पंजाब के शहरों से इस क्षेत्र को आने के लिए कण्डी जोत तथा भुबुजोत दो ही दर्रे थे जिनसे घोड़े तथा खच्चरों पर आवागमन हुआ करता था। यारकन्द क्षेत्र से परमिट पर मनों के हिसाब से चरस लाई जाती थी जो पंजाब के कस्बों में सरकारी ठेकों पर बिका करती थी। चरस को आम भाषा में यारकन्दी के नाम से पुकारा जाता था। उन दिनों गाड़ियां, मोटरें आदि नहीं थीं। लोग पैदल अथवा घोड़ों, खच्चरों पर लम्बी दूरियां तय किया करते थे। इस शताब्दी के तीसरे दशक में श्री डब्ल्यू. एच. डोनाल्ड डी. आ. जब रिटायर हुए तो उन्होंने 'डोबी' में बंगला बनवाया और बगीचा लगाया। उन्होंने लाहौर से कार भी खरीदी जिसे मण्डी से मजदूरों और औजारों की सहायता से पांच दिनों में 12 फरवरी सन् 1927 को बहुत मुश्किल से कुल्लू तक पहुंचाया गया। उसके बाद ही लोक निर्माण विभाग द्वारा 'डोबी' तक मार्ग को कुछ साफ और चौड़ा किया गया और तब सन् 1928 में कार तथा 16 सीटों वाली गाडियां मनाली और कुल्लू के बीच चलनी प्रारम्भ हुई। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में यूरोप के महान् व्यक्तियों का यहां आना-जाना शुरु हो गया था।

उनमें से कुछ लोगों ने यहां पर स्थाई तौर पर रहना भी आरम्भ कर दिया। इससे पहले सन् 1866 में कैप्टन ए. टी. बैनन मनाली में जमीन लेकर बस गये थे। वे आयरलैंड के रहने वाले थे। उन्होंने सर्वप्रथम Cox's आरेन्डा पीपन किस्म के सेब के पौधे यहां पर पहले पहल लगाये। वे भारत की स्वतन्त्रता के हक में थे। खुफिया एजेन्सियों की रिपोर्ट के आधार पर उन्हें फौज से निकाल दिया गया था। उन्होंने टीहरी गढ़वाल की रहने वाली महिला श्रीमती राजी से विवाह किया था। उन के चार पुत्र हुए, जिनके परिवार आज भी मनाली में रह रहे हैं।

मनाली में सेब की उत्पादकता के साथ ही इन्हें विक्रय हेतु बाहर की मण्डियों में भेजने की व्यवस्था के परिणाम स्वरूप सन् 1903 में 'डफडम्बार' नाम से एक डाकघर खुला। सन् 1933 में यहां 'तार' का सिलसिला भी शुरु हो गया। सन् 1936 में 'डफडम्बर' डाकघर का नाम बदल कर मनाली रख दिया गया।

लाहौर तथा हिन्दुस्तान के अन्य सूबों से अंग्रेज़ अधिकारियों की आमद को देखते हुए 1911 में यहाँ (मनाली) पर एक डाक बंगला बनाया गया तथा बेगार पर आए हुए तथा अन्य मुलाजिमों के रहने की व्यवस्था के दृष्टिगत 'पालघर' भी स्थापित किए गए।

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में इग्लैंड की स्पोङ्क कम्पनी ने रेलवे के लिए सप्लाई हेतु कुल्लू बंजार तथा पार्वती घाटियों में देवदार की शहतीरों का ठेका लिया। अंग्रेज सरकार ने जंगलों से होने वाली आय के दृष्टिगत सारे बिहालों, मैदानों और पहाड़ियों पर वृक्षारोपण के लिए सर्वे किया। वन विभाग द्वारा दानाबिहाल व स्याल बिहाल जहां कांटेदार झाड़ियों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था, 1884 में तारबन्द टुकड़ों में वृक्षों का बीजारोपण किया। सन् 1888 व 1889 में रिजर्व /3 दाना बिहाल के 27 एकड़ के रकबे में पौधारोपण किया गया तथा

रिजर्व /4 बिहाल के 61 एकड़ के रकबे में पौधारोपण करके इनको तारबन्द (प्रतिबन्धित) कर दिया गया। सन् 1926 की गणना के अनुसार R/3 दानाबिहाल के 27 एकड़ के रकबे में 77582 वृक्ष और R/4 स्याल बिहाल के 61 एकड़ के रकबे में (जहां वर्तमान समय में बाजार, बस स्टेंड तथा बड़े-बड़े होटल हैं) 183198 वृक्ष खड़े थे। उन दिनों वनविभाग के कर्मचारी इन जंगलों की बहुत चौकसी किया करते थे। आजकल इन बिहालों के जंगलों की स्थिति बहुत ही खराब है। जर्मन वनस्पति वैज्ञानिक Mr. G. Ranowsky Peter Lothas जो सितम्बर 1981 में यहां घूमने आए थे, ने इन जंगलों को देखने के बाद टिप्पणी की थी कि बाजार के निकट का जंगल अगले 50 वर्षों में पूरी तरह से नष्ट हो जाएगा।

शिक्षा व्यवस्था :—

मनाली में प्रथम प्राईमरी पाठशाला की स्थापना 13 अक्तूबर सन् 1907 को पंडित सुखचैन जी द्वारा एक कमरे में की गई थी। वे मुश्किल से एक अध्यापक और 12-13 विद्यार्थी ही जुटा पाये थे। सन् 1925 में विद्यार्थियों के आग्रह पर इसे लोअर मिडल का दर्जा दिया गया परन्तु विद्यार्थियों की संख्या कम होने के कारण इसे 1935 में फिर से प्राईमरी तक ही कर दिया गया। सन् 1958 में भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरु के यहां आगमन पर पंडित नेहरु इसी पाठशाला के मैदान में उन्होंने लोगों को सम्बोधित किया था। सन् 1959 में जनता की मांग पर इसे हाई स्कूल का दर्जा मिल गया। आज भी हाई स्कूल यहां पर चल रहा है।

स्वास्थ्य व्यवस्था :—

सन् 1933 में एक आर्युवैदिक औषधालय की स्थापना यहाँ पर हुई। यह औषधालय लोगों की स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताओं के दृष्टिगत पर्याप्त नहीं था अतः लोगों ने कैथोलिक मिशन वालों से संपर्क किया, उन्होंने अस्पताल के लिये एक बिल्डिग तैयार की। सन् 1935 में लार्ड और लेडी

बिलिंडटन कुल्लू आये तो लेडी बिलिंडटन ने इस अस्पताल का उद्‌घाटन किया। सन् 1954 में यहां एक सिविल डिस्पैन्सरी भी स्थापित की गई जो वर्तमान समय में एक बड़े अस्पताल के रूप में यहां विद्यमान है। परन्तु जैसा सेवाभाव मिशन अस्पताल में है वैसा सेवाभाव वहां नहीं।

झीणा राणा का राज्य काल :-

बाहरवीं शताब्दी में मनाली पर फंग नामक राणा का राज्य था उसकी असमय ही मृत्यु के बाद उसका बेटा झीणा राणा राजा बना और अपनी बहादुरी से उसने तमाम मनाली पर अपना अधिकार कर लिया। वह गर्मियों के मौसम में राजधानी 'मनणकोट' नामक किले पर ले जाता था और सर्दियों में मनाली गांव के पास एक गढ़ (किले) में ले जाता था। 'मनणकोट' मनाली गाँव से सीधा चढ़ाई पर एक मैदानी क्षेत्र है। राणा के घोड़े का साईस शान्हांग गांव का तुलसु नामक बहादुर मच्याणी था। उसको नौ मुठ्ठी लम्बी दाढ़ी थी। वह राणा के विरुद्ध षड्यन्त्र रचकर राज्य को हथियाने की फिराक में था।

एक बार शान्हांग गांव में एक बैल की पीठ पर एक श्यारी चिड़िया बैठी थी। राणा ने तुलसु को कहा कि यदि वह तीर से उस चिड़िया को मार देगा तो उसे बहुत इनाम दिया जायगा। परन्तु तुलसु ने कहा कि यदि मैंने चिड़िया मार दी तो मैं आपको भी मार दूंगा। यदि चिड़िया को न मार सका तो आप मुझे मार देना। राणा ने शर्त स्वीकार कर ली। तुलसु ने तीर से चिड़िया को मार दिया। यह देखकर राणा घोड़े सहित भाग गया लेकिन तुलसु ने राणा का पीछा किया और शान्हांग गांव तथा घुशाल के बीच 'लगी' नामक स्थान पर राणा को तीर मारने में सफल हो गया। घोड़ा घायल राणा को लेकर मनण कोट की तरफ भागा। मार्ग में 'कुहल डहग' नामक स्थान पर राजा ने घोड़े से उतर कर पानी पिया और वह मर गया। जब खाली घोड़ा 'मनणकोट' पहुंचा तो

महल में हाहाकार मच गया। दूसरी तरफ तुलसु ने मनणकोट किले पर तथा रानियों पर अपना आधिपत्य करने के इरादे से उस तरफ कूच कर दिया लेकिन रास्ते में शोहड़हूग के पास उसकी टांग सड़ गई और वह बेकार हो गया। उधर मनण-कोट में रानियों ने किले में पड़े बारूद को आग लगा दी और स्वयं भी आग में भस्म हो गई। कहा जाता है कि भस्म होने के बाद रानियों ने योगिनियों का रूप धारण कर लिया और मनणकोट व शान्हांग में अपना वास कर लिया। आज भी शान्हांग में योगिनियों की पूजा की जाती है लेकिन पूजा करते समय गूर इस बात का विशेष ध्यान रखता है कि उस समय वहां पर कोई मच्याणी परिवार का सदस्य उपस्थित न हो। कहा जाता है कि मनालीगढ़ (मनणकोट) में काफी सोना चान्दी दबा पड़ा है। इस किले को सबसे पहले रैनक साहब ने खरीदा। उसके बाद उनसे इस किले को बजौरा के लाला हीरालाल ने खरीदा। कहते हैं वहां खुदाई करने पर सांप निकलते हैं।

फागली पर्व का महत्त्व :-

कोठी मनाली गाँव में टुण्डी नामक एक राक्षस रहा करता था जो ऋषि मुनियों की तपस्या को भंग किया करता था। तपस्वियों ने आपस में विचार विमर्श करने के बाद निर्णय लिया कि टुंडी राक्षस का विवाह करवा दिया जाए ताकि पत्नी के सानिध्य से उसे प्यार का एहसास हो और वह सभी प्राणियों के साथ स्नेहपूर्वक व्यवहार कर सके। यह निर्णय कर लेने के बाद उन्होंने शालंग के कांलग गांव की एक लड़की को प्रलोभन देकर विवाह के लिए राजी कर लिया। विवाह के बाद टुण्डी की उद्दण्डता समाप्त हो गई। तपस्वियों ने सुख की सांस ली। इसलिए शान्ति स्थापित होने की खुशी में हर वर्ष माघ शुक्ल पक्ष को फागली मनायी जाने लगी। टुण्डी राक्षस भी इसमें भाग लेता था। उसे जब मनुष्य के स्वादिष्ट मांस की याद आती थी तो लोग एक दूसरे के बाल जला कर उसकी गन्ध से राक्षस को संतुष्ट करते। यह परम्परा आज भी चली आ रही है। एक दूसरी

कथा इस प्रकार कही जाती कि है रूपा-धूपा नाम के देवता घुशाल गांव में निवास करते थे। जब गौतम ऋषि ने वह स्थान अपने निवास के अनुकूल पाया तो उन्होंने रूपा-धूपा को वहां से दूर भेजने का षड्यन्त्र रचा। फागली पर्व का नाच चल रहा था। टुण्डी राक्षस सबसे आगे नाच रहा था। रूपा-धूपा भी नृत्य में सम्मिलित थे। टुण्डी के प्रभाव से नाचने वाले सभी व्यक्ति जिनमें एक लुहार-लुहारिन भी बाजा बजा रहे थे, शामिल थे शिला हो गए लेकिन लुहार ने उससे पहले अपनी शान्नसी (बर्तन पकड़ने वाला चिमटा) से टुण्डी के पाँव को जकड़ लिया और सभी शिला बने लोगों को पुनः मनुष्य बनाने को कहा। टुण्डी ने अपने पाँव को छुड़ाने के लिए रूपा-धूपा तथा लुहार-लुहारिन को छोडकर सभी को मनुष्य रूप में ला दिया। गौतम ऋषि का षड्यन्त्र सफल रहा। उन्होंने रूपा-धूपा, लुहार लुहारिन को 'ट्रांग ढंग' पर फैंक दिया जो अभी भी ट्रांग ढंग वर्तमान नेहरू कुण्ड की चट्टान पर उलटे टंगे दिखाई देते हैं। गौतम ऋषि ने घुशाल गांव में अपना निवास बना लिया। श्रावण मास में पलचान व बुआ गाँव के बीच शरणि (श्रावण) मेला मनाया जाता है। उस दिन शान्डल ऋषि टुण्डी की पत्नी को छोटा ब्यागण (लाहुल) अपने पति के पास विदा करते हैं और इस तरह से शारणी (श्रावणी) जात्र सम्पन्न होती है। टुण्डो और उसकी पत्नी फागली के लिए घुशाल आते हैं।

दिशोहर झील या शोलाशोहर :-

यह झील रोहतांग जोत से पश्चिम दिशा में लगभग दो-अढाई मीटर के घेरे में है, जिसकी गहराई का आजतक पता नहीं लगाया जा सका है। पूर्व काल से ही 20 भादों को लोग पैदल ही इस झील की यात्रा पर जाया करते थे। अब लाहुल से अनेक बसें इस तरफ जाती हैं। मढ़ी नामक स्थान से नीचे रानी ग्लेशियर से पूर्व पहले मोड़ पर उतर कर 4-5 किलो-मीटर की चढ़ाई चढ़ कर इस झील तक पहुंचा जा सकता है। इस झील के बारे में कंवर टेढी सिंह ने लाहौर से कुलान्त पीठ

नामक एक पुस्तक उर्दू में सन् 1935 में प्रकाशित करवाई थी। उनके अनुसार 14वीं शताब्दी में भरतपुर के राजा विचित्रसेन को वृद्धावस्था में कन्या सन्तान की प्राप्ति हुई लेकिन कन्या की एक टाँग घोड़े की थी। गणितज्ञों तथा ज्योतिषियों ने बताया कि उत्तराखण्ड में हिमालय की किसी झील के पार एक घोड़ी घास चरते समय झील में गिर पड़ी थी। उसकी एक टाँग झील से बाहर रह गई थी। जब तक वह टांग झील के पानी में नहीं डूबेगी तब तक राजकन्या की टांग ठीक नहीं हो सकती। राजा द्वारा सेवकों के दल झील की तलाश में भेजे गये। पूछ-ताछ करते एक दल दिशोहर झील के पास पहुंचा और घोड़ी की टांग को पानी में डुबोया। उस दिन 20 भादों था। राजा की पुत्री की टांग ठीक होने की खुशियां मनाई गई। उस दिन से इस झील का महत्त्व बढ़ गया। उस समय से प्रति वर्ष 20 भादों यानि 4-5 सितम्बर को झील में हज़ारों लोग पवित्र स्नान करके पुण्य कमाते हैं।

●

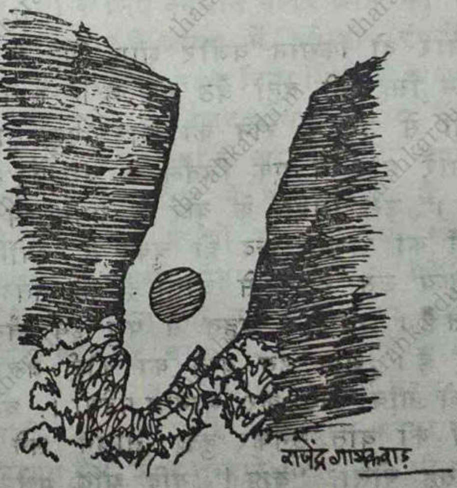

भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का प्रथम स्वतन्त्रता सेनानी

वज़ीर राम सिंह पठानिया

संसार चन्द्र 'प्रभाकर'

अंग्रेजी साम्राज्यवाद के विरुद्ध भारत का पहला स्वतन्त्रता संग्राम सन् 1857 ई० में नहीं अपितु सन् 1848 ई० से ही हिमाचल प्रदेश के शूरवीरों ने आरम्भ कर दिया था जिस की चिंगारियां सन् 1857 ई० में सारे देश में भड़क उठीं। सन् 1848 से पहले स्वतन्त्रता संग्राम का नेता वज़ीर राम सिंह पठानिया था। इस बहादुर सपूत का जन्म सन् 1824 ई० में रियासत नूरपुर के वज़ीर शाम सिंह के घर हुआ। यह बचपन से ही बड़े वीर थे। जब वह 11 वर्ष के थे तब इनके जीवन में एक घटना घटी जिससे इनकी वीरता का परिचय मिलता है।

एक बार दो किसान वजीर शाम सिंह के पास रोते हुए आये। राम सिंह भी वहां बैठे हुए थे। वजीर शाम सिंह ने उन किसानों से उन के रोने का कारण पूछा तो वे बोले; महाराज! हमारे गांव में एक सिबंल के वृक्ष पर ततैय्यों (रंगड़ों) की भिड़ है। उस सिंबल के वृक्ष के समीप से गांव के पशुओं और मनुष्यों का रास्ता बन्द हो चुका है क्योंकि जब कोई पशु या मनुष्य उस रास्ते से जाता है तो ततैय्ये (रंगड़) उस पर टूट पड़ते हैं। गांव के बहुत से पशु इन ततैय्यों (रंगड़ों) ने मार गिराए हैं। आप इस बात का कोई बचाव करें नहीं तो लोगों को गांव छोड़ कर भागना पड़ेगा। वज़ीर शाम सिंह उन किसानों की बात सुनकर कुछ सोचने लगे परन्तु पास बैठा राम सिंह बोला, "बापू! यदि आप मुझे आज्ञा दें तो

में कल दिन चढ़ने से पहले उन ततैय्यों (रंगड़ों) को समाप्त कर दूं"। वज़ीर शाम सिंह ने राम सिंह को बच्चा समझ कर ऐसा करने की आज्ञा नहीं दी परन्तु राम सिंह हठ के पक्के थे, बहादुर थे, उनके मन में यह बात थी कि हमारे होते हुए लोगों को कोई दु:ख नहीं होना चाहिए। दूसरी ओर वज़ीर शाम सिंह ने उन किसानो को उनकी रक्षा करने का वचन देकर भेज दिया था। राम सिंह अपने मन में उन ततैय्यों (रंगड़ों) को मारने की योजनाएं सोचने लगे। रात को उन्हें नींद न आई और आधी रात के समय राम सिंह उठे। उन्होंने एक काला कम्बल ओढ़ा, दराट् लिया और उस गांव की ओर चल दिए जहां वह ततैय्यों (रंगड़ों) वाला सिंबल का वृक्ष था। जब वह उस 'सिंबल' के वृक्ष के पास पहुंचे तो उन्होंने काला कम्बल अपने सिर पर लपेट लिया और वृक्ष पर चढ़ गये। रात के समय सारे ततैय्ये भिड़ के अन्दर थे क्योंकि शीत ऋतु थी। राम सिंह ने उस भिड़ (छत्ते) के पास जाकर दराट से भिड़ काट दी और उसे कम्बल की गांठ में बांध कर झट नीचे उतर आये। वृक्ष के नीचे आकर भिड़ को पक्का कर के कम्बल में रस्से सेबांधा और बाँस के डण्डे में लटका कर घर की ओर चल दिए। इस सारे काम को करते हुए पौ फट चुकी थी। वज़ीर शाम सिंह नहा-धो कर पूजा के लिए हनुमान मंदिर जाने की तैयारी कर रहे थे उसी समय राम सिंह ने आंगन में ततैय्यों (रंगड़ों) की भिड़ वाला कम्बल शाम सिंह के आगे पटक दिया। कम्बल के अन्दर ततैय्यों (रंगड़ों) के उड़ने की आवाज़ सुनकर शाम सिंह राम सिंह की ओर देखकर बोले, 'बेटा ! यह तू क्या ले आया है'? अपने पिता जी की यह बात सुनकर राम सिंह ने कहा, 'बापू मैं उन सभी ततैय्यों (रंगड़ों) को जोकि पशुओं और मनुष्यों को खाते थे पकड कर ले आया हूं, इस समय ये सारे मेरे कम्बल के अन्दर कैद में हैं, आप इन को जो सजा देना चाहते हो दे दो।' राम सिंह की यह बात सुनकर वज़ीर शाम सिंह सन्न रह गए। बोले, 'बेटा— तू हिमाचल का बहुत बड़ा वीर होगा और हमारी प्रजा पर यदि कोई ज़ुल्म करेगा तो उसे सज़ा देने की पूरी हिम्मत मैंने आज तुम्हारे अन्दर देख ली है'। सुबह लोग इक्ट्ठे हुए और उन्होंने उन सभी ततैय्यों को कम्बल के

साथ ही आग लगा दी। बालक राम सिंह की इस वीरता को देख और सुन कर लोग दंग रह गए। सन् 1846 में जब वजीर शाम सिंह वृद्ध हो गए तो उन्होंने अपना कार्य भार राम सिंह को संभाल दिया। राम सिंह को नूरपुर की रियासत के वज़ीर की पदवी देकर शाम सिंह स्वयं पूजा-पाठ में लगे रहते। उन दिनों नूरपुर के राजा वीर सिंह स्वर्ग सिधार चुके थे और उन का बेटा (टिक्का) जसवन्त सिंह अभी नाबालिग था। इसलिए नूरपुर की रियासत का सारा काम-काज वज़ीर राम सिंह के हवाले हो गया था। सन् 1846 ई० में जब सिक्खों की पहली लड़ाई का अन्त हुआ तो उसके परिणाम-स्वरूप सतलुज और रावी नदी के मध्य का इलाका अंग्रेज़ी शासन के अधीन आ गया और शेष इलाका महाराजा गुलाब सिंह (जम्मू) के कब्ज़े में आ गया। अब सतलुज और रावी नदी के मध्य के इलाके में देशी राजा इस लिए प्रसन्न थे कि अंग्रेज उनके इलाकों को लौटा देंगे। परन्तु बात इससे उल्ट ही हुई क्योंकि अंग्रेज तो सारे भारत पर अपना राज्य स्थापित करना चाहते थे। उन्होंने सिक्खों और पहाड़ी राजाओं की रियासतों पर धीरे-धीरे अपना अधिकार करना आरम्भ कर दिया, इस लिए पहाड़ी राजा अंग्रेजों से नाराज़ हो गये और उन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। साम्राज्यवाद के विरुद्ध भारत में पहाड़ी राजाओं की यह पहली टक्कर थी। स्वतन्त्रता संग्राम के इस युद्ध का प्रथम स्वतन्त्रता सेनानी और पहाड़ी राजाओं का पहला नेता वजीर शाम सिंह पठानिया था।

सर्वप्रथम नूरपुर की रियासत के वज़ीर राम सिंह ने अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया। जम्मू के इलाके-के कुछ मन्हास (राजपूत) और जसरोटिए (राजपूत) तथा अपने इलाके के कुछ कटोच (राजपूत) और कुछ पठानिए (राजपूत) नौजवान इक्ट्ठे करके राम सिंह ने शाहपुरकण्डी (पंजाब) के किले पर चौदह अगस्त, 1848 ई० की रात को हमला बोल दिया। इस आकस्मिक आक्रमण से अंग्रेज़ी सेना की जो टुकड़ी शाहपुरकण्डी के दुर्ग के अन्दर थी यह घबरा गई। इससे पहले कि अंग्रेज़ी सैनिक हथियार छोड़ देते, वज़ीर

राम सिंह पठानिया अपने कुछ नौजवान लड़ाकू साथियों को ले कर किले की दीवार फांद कर किले के अन्दर पहुंच गए और भीषण मार-काट आरम्भ कर दी। शाहपुर कण्डी के दुर्ग पर पन्द्रह अगस्त, 1848 ई० को स्वतन्त्रता सेनानियों का झण्डा फहराने लगा। इसके उपरान्त 15 अगस्त 1848 ई० को ही वजीर राम सिंह ने पठानकोट से लेकर अपनी सारी नूरपुर रियासत में ढोल पिटवाकर मुनादी करवा दी। **"मैं वजीर राम सिंह पठानिया यह घोषणा करता हूं कि आज से अंग्रेजी हकूमत नूरपुर की रियासत से खतम कर दी गई है और आज से नूरपुर रियासत का राजा जसवन्त सिंह है तथा मैं उनका वजीर हूं।"** इस घोषणा को सुन कर जसरोट के चार सौ लड़ाकू युवक तथा कुछ और पठानिए राजपूत वजीर राम सिंह की सेना में आ कर मिल गए। इलाके के कुछ सम्मानित लोग भी राम सिंह को इस विजय के लिए बधाई देने पहुंचे। जसरोट की फौज का नेतृत्व मन्हास मंगल सिंह ने किया।

अंग्रेजी अधिकारी राम सिंह की उक्त घोषणा से घबरा गए। उस समय के जालन्धर के कमिश्नर 'हेनरी लारेंस' और कांगड़ा के डिप्टी कमिश्नर 'वार्नस' कुछ फौज के दस्तों को लेकर शाहपुर कण्डी के दुर्ग की ओर बढ़े। बड़ा घमासान युद्ध हुआ। वजीर राम सिंह पठानिया कई दिनों तक वीरता से लड़ता रहा परन्तु दुर्ग में खाने-पीने की सामग्री समाप्त हो जाने से उन्हें किला खाली करने पड़ा और वह अपने लड़ाकू बहादुरों के साथ मऊ कोट के जंगल में चले आए। वहां से कई दिन तक गुरिल्ला युद्ध करके वजीर राम सिंह ने अंग्रेजी सेना का सफाया किया।

वजीर राम सिंह अंग्रेजों को हिमाचल से नहीं अपितु भारत से बाहर खदेड़ना चाहते थे। इसलिए वह नूरपुर के जंगलों से निकलकर सिक्खों से गठ-जोड़ करने के लिए गुजरात पहुंचे। यहां रसूल नामक गांव में सिक्ख नेता का कैम्प था। सिक्ख अंग्रेजों से पहले ही नाराज थे उन्होंने वजीर राम सिंह की बात मान ली और पांच-पांच सौ सैनिकों की दो सिक्ख रेजमेंटें सिक्ख नेता बसाखा सिंह के नेतृत्व में पठानकोट के शाहपुर कण्डी किले

पर आक्रमण करने के लिए भेज दीं। पठानकोट के शाहपुर कण्डी दुर्ग पर पुनः वज़ीर राम सिंह का अधिकार हो गया, अंग्रेजी सेना कुछ भाग गई और कुछ मारी गई। राम सिंह की इस विजय का समाचार सुनकर अंग्रेजी सेना घबराई और वह भी पठानकोट की ओर भाग गई। इस सेना के भाग जाने से जसवां के राजा उमेद सिंह, दातारपुर के राजा जगत चन्द तथा ऊना के सिक्ख सन्त विक्रम सिंह वेदी ने अपनी-अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी। कांगड़ा के राजा प्रबोध चन्द कटोच ने सुजानपुर के दुर्ग में इक्कीस तोपों की सलामी से अपना उतारा हुआ शाही ताज पुनः सिर पर रख लिया। हिमाचल प्रदेश में चारों ओर प्रसन्नता की लहर फैल गई। इसे देख कर कांगड़ा के डिप्टी कमिश्नर 'वार्नस' ने अपना एक दूत कांगड़ा के राजा प्रबोध चन्द के पास भेजा और उसके पास यह कहला भेजा कि प्रबोध चन्द 'रियाय' का दुर्ग खाली करके महल मोरिया चला जाए तो उसे पैन्शन तथा ज़ागीर दे दी जाएगी। राजा प्रबोध चन्द ने दूत से अंग्रेजों का यह सन्देश पाकर क्रोधित होकर दूत के सिर के बाल कटवा दिए तथा वापस कहला भेजा कि अंग्रेज एक सप्ताह के अन्दर सारा त्रिगर्त खाली कर दें अन्यथा उन के साथ बहुत बुरा व्यवहार किया जाएगा। त्रिगर्त नरेश प्रबोध चन्द का यह सन्देश सुनकर गोरे चौकन्ने हो गये और उन्होंने गुलेर के राजा शमशेर चन्द से सांठ-गांठ कर ली। अब तक गुलेर का राजा शमशेर चन्द अंग्रेजों को भेद देता रहा। तब तक नूरपुर से लेकर रोपड़ तक का सारा इलाका स्वतन्त्र हो चुका था।

सन् 1848 ई० में अंग्रेज़ी सेना ने जब पठानकोट की ओर कूच किया तो योजना के अनुसार जसवां तथा दातारपुर की सेनाओं ने अंग्रज़ी सेना पर पीछे से आक्रमण कर दिया परन्तु गुलेर के राजा शमशेर चन्द ने अंग्रेजी कमाण्डरों को देसी राजाओं की इस योजना की खबर पहले ही पहुंचा रखी थी इसलिए इस सूचना से चौकन्ने होकर अंग्रेजों ने अपनी सेना की कुछ टुकड़ियां व्यास नदी के किनारे रास्ते में छुपा रखी थीं।

जब दोनों सेनाओं का सामना हुआ तो राजपूत दोनों ओर से घेरे में आ गये। बड़ा घमासान युद्ध हुआ परन्तु देसी राजाओं की सेना के पैर उखड़ गए। अंग्रेजों की विजय हुई। प्रबोध चन्द के साथ दूसरे देसी राजाओं को पकड़ कर अलमोड़ा की जेल में भेज दिया गया। सिक्ख सन्त विक्रम सिंह बेदी भागकर सिक्ख राजा शेर सिंह के पास जा पहुंचे।

वज़ीर राम सिंह ने इस भारी पराजय से भी हिम्मत न छोड़ी। उन्होंने सिक्ख राजा शेर सिंह से पाँच सौ सिक्ख सैनिक मांगे। राजा शेर सिंह ने अब की बार भी राम सिंह की बात मान ली। इसके साथ ही बसोली के राजा जिनका नाम भी शेर सिंह था, ने राम सिंह की सहायता के लिए पांच-पांच सौ सैनिकों की दो रेजमेंटें भेजीं। वज़ीर राम सिंह ने और भी देसी राजाओं से सहायता के लिए पत्र भेजे परन्तु किसी ने भी सहायता का वचन नहीं दिया। कई गांवों के लोग राम सिंह की स्वतन्त्र रूप से सहायता के लिए आए जिन में से सोलह युवक एक ही गांव भलाख समीप गगंथ तह० नूरपुर के थे। इनके नाम इस प्रकार हैं :— 1. राम सिंह पुत्र श्री नन्दू 2. श्री मेहरु 3. श्री भीखम सिंह 4. श्री भील सिंह 5. श्री रूप सिंह 6. श्री वज़ीर सिंह 7. श्री गजे सिंह 8. श्री मियां सिंह 9. श्री गोपाल सिंह 10. श्री केहर सिंह 11. श्री साहिब सिंह 12. श्री प्यार सिंह 13. श्री फूला सिंह 14. श्री पंजाब सिंह 15. श्री वकील सिंह 16. श्री ज्वाला सिंह 17. श्री महोवा सिंह तथा मौजा करोह से मिलखी राम तथा श्री केसर सिंह भी थे। इस के अतिरिक्त कन्दोर तथा लुहारा गांवों से भी कुछ युवकों ने इस स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया। इस प्रकार नूरपुर की रियासत के गांवों से लगभग पांच सौ लड़ाकू युवक राम सिंह के झण्डे के नीचे चले आए और वज़ीर राम सिंह की सेना अब तीन हजार तक हो गई। जब अंग्रेजों को इस बात का पता चला तो वह घबराए और अपनी सेना लेकर 'बौड' (नूरपूर) की ओर बढ़े।

वज़ीर राम सिंह पठानिया ने अब अपना मोर्चा पठानकोट से उत्तर पूर्व की ओर शिवालिक की एक ऊंची पहाड़ी जो

समुद्र तट से 2772 फुट ऊंची है, 'डल्ले की धार' पर लगाने की सोची। इस से पहले वज़ीर राम सिंह ने अंग्रेजी सेना पर जो 'कम्मणी दे पैल' में मोर्चे डाले थे उसने आक्रमण कर दिया। यह स्थान सुल्यालो गांव के पास दो पहाड़ियों से घिरा है। इस युद्ध में हजारों की संख्या में अंग्रेजी सैनिक मौत के घाट उतारे गए। चक्की नदी का पानी भी लहू से लाल हो गया। इस घटना को सुनकर अंग्रेजों की एक और कुमक कलकत्ता से नूरपुर रियासत में पहुंची। अब राम सिंह ने अपना मोर्चा 'डल्ले की धार' पर लगाया जिसको राम सिंह की बार (Balled of Ram Singh Pathania) में इस प्रकार गाया जाता है :—

जो— 1. डल्ले दिया धारा डफ्फले वज्जदे,
कुम्मणी बजन तम्बूर राजा ॥
कोई किल्ला पठानिया जोर लड़िया,
कोई बेटा वज़ीरा दा खूब लड़िया ॥

2. कलकत्ते तों चढ़ियां अंग्रेज फौजां,
ता बौड़ा दे चढ़ी गए वज़ीर राजा ॥
भई किल्ला पठाणिया जोर लड़िया.
कोई बेटा वज़ीर दा खूब लड़िया ॥

3. शाम सिंह दे घर राम सिंह जम्मिया,
जम्मियां कोई बलकार राजा
जमदियां लई तलवार राजा
कोई बेटा वज़ीरा दा खूब लड़िया,
भई किल्ला पठाणिया जोर लड़िया ॥
बुक्कां-बुक्कां दारू बडदा,
टीकरूआं वंडदा तीर राजा।
ओए चण्डी तेरी शमशीर राजा,
कोई किल्ला पठाणिया खूब लड़िया।
कोई बेटा वज़ीर दा खूब लड़िया ॥

इस बार बैलेड (Balled) को इस प्रकार भी गया जाता है :—

मेकी लड़ना दे गोरियां नाल राजा।
मैं तां लड़ना फरंगिया नाल राजा।
गोरे कडणें देसे तों बाहर राजा।

कोई ऐसा पठाणिया जोर लड़िया,
कोई बेटा वज़ीर दा खूब लड़िया॥

लिखी परवाने राजियां की भेजदा
राजियां दित्ता जवाव राजा
तुसीं करने ओ राजियो राज राजा
असीं रखणीं कुले दी लाज राजा
असीं रखणीं देसे दी लाज राजा

कोई ऐसा पठाणिया खूब लड़िया,
कोई किल्ला पठाणिया जोर लड़िया॥

पैहलें तां खर्चा राजियां मन्नियां,
पिच्छें तें दित्ता जवाव राजा।
तूं लड़ियां अपणें भाग राजा।
कोई बेटा वजीर दा खूब लड़िया।
कोई किल्ला पठाणियां खूब लड़िया॥

तूं जे लड़ाई बिच्च कुम्मणीं दे कीतिऐ।
लऊए दे बगी गए न नाल राजा।
असीं लड़ना फरंगियां नाल राजा।
कोई किल्ला पठाणिया खूब लड़िया,
कोई बेटा वज़ीर दा खूब लड़िया॥

इक्की फट्टें अंग्रेज कई मारे न,
ओथें मारिया व्हीलर साहब राजा।
तू लिया ऐ पूरा हिसाब राजा,
कोई किल्ला पठाणिया खूब लड़िया।
कोई बेटा वज़ीर दा खूब लड़िया॥

वज़ीर राम सिंह पठानिया का 'डल्ले दी धार' का मोर्चा बड़ा मजबूत था। स्वतन्त्रता की इस लड़ाई में गांवों की स्त्रियों और लोगों ने भी बढ़चढ़ कर योगदान दिया। यदि पुरुष लड़ाई को गए तो स्त्रियों ने उन्हें खाना बना कर गांवों के धीवरों (झीरों) के पास वहंगियों में डाल कर भेजा। वज़ीर राम सिंह ने डल्ले की धार से पुनः गुरिल्ला युद्ध नीति अपनाई। वज़ीर राम सिंह के लड़ाकुओं के अचूक निशानों से सैकड़ों अंग्रेजी सैनिक मारे गए। राम सिंह की इस गुरिल्ला रणनीति से अंग्रेजी सेना घबरा गई।

अब ब्रिगेडियर व्हीलर के अधीन अंग्रेजों की बहुत सी सेना डल्ले की धार की ओर बढ़ी। पुकेसर और मरीकोट के घने जंगलो में दोनों सेनाओं की मुठ-भेड़ हुई। राम सिंह के वीरों ने अंग्रेजी सेना गाजर-मूली की भांति काट दी। लाशों के अंबार लग गए। उस समय इनाम लेने के लालच में मलक विक्टोरिया के निकट सम्बन्धी 'रावर्ट पील' का भतीजा 'जाहन पील' और उसके साथी आगे बढ़े। वज़ीर राम सिंह उस समय घेरे में आ गए थे। उन्होंने अपनी पच्चीस सेर वज़नी ($12\frac{1}{2}$ किलो ग्राम) 'चण्डी' नामक तलवार से 'जाहन पील' तथा उसके चार साथियों के सिर धड़ से अलग कर दिए। 'डल्ले की धार' पर खुदा शिला लेख अभी तक भी राम सिंह के युद्ध की याद दिलाता है। इस लेख के शब्द इस प्रकार हैं :— लैफ्टीनेंट 'जाहन पील' की पवित्र स्मृति में जो प्रथम स्थानीय इन्फेंट्री के थे 17 जनवरी, 1849 ई० को वह उस समय घावों के कारण शहीद हुए जबकि वह वीरता पूर्वक अपने सैनिकों का नेतृत्व कर रहे थे। यह शिला लेख 51 सिक्ख ऐफ-ऐफ के अधिकारियों द्वारा लगाया गया।

'डल्ले की धार' की इस मुठ-भेड़ वज़ीर राम सिंह के अनेक सैनिक मारे गए और इस मुठ-भेड़ के उपरान्त उनके पैर उखड़ गए। वह वहां से पहाड़ी राजाओं से सहायता लेने हेतु, कांगड़ा डाडासीबा, गुलेर और नादौन गए परन्तु किसी ने भी सहायता

का वचन न दिया। विवश होकर वह कांगड़ा पहुंचे जहां एक ब्राह्मण ने उन्हें शरण दी। इस ब्राह्मण का नाम पहाड़ चन्द था।

अंग्रेज वज़ीर राम सिंह का पीछा कर रहे थे। त्रिगर्त पुस्तक में वज़ीर राम सिंह को अंग्रेजों से पकड़वाने की बात पहाड़ चन्द के नाम मढ़ी गई है। इस पुस्तक में इस प्रकार लिखा है 'एक बार राम सिंह पठानिया दुर्गाष्टमी के दिन जब कांगड़ा के प्रसिद्ध मन्दिर ब्रजेश्वरी में पूजा कर रहे थे, उस समय गोरों ने उन्हें निहत्थे पकड़ लिया और बन्दी बना कर रंगून भेज दिया (त्रिगर्त पृष्ठ संख्या-४५) परन्तु इस बात का खण्डन एस० ए० जैन कॉलेज अंबाला के इतिहास विभाग के एक लेख से हो जाता है। इस लेख के चौथे पृष्ठ पर तेरहवीं पंक्ति में 'गंगू' नाम के ब्राह्मण का उल्लेख है जो वज़ीर राम सिंह का रसोइया था। इस लेख में वजीर राम सिंह के अंग्रेजों द्वारा पकड़े जाने का स्थान 'डल्ले की धार' ही बताया है। वज़ीर राम सिंह जी के निकट के सम्बंधी वज़ीर राम सिंह जी को पकड़वाने का लांछन रसोइए पर भी नहीं लगाते। 'शीराजा डोगरी' में वज़ीर राम सिंह जी के पकड़वाने की बात इस प्रकार लिखी है 'इक्क फत्तू नाएं दा राजपूत अंग्रेजां ने मिलिया था तिन्नीं म्हाचले रे सूरमे वज़ीर राम सिंह पठानिए जो उस वक्त पकड़वाई दिता जिस वक्त सैह अपणें पूजा-पाठे च लगियो थे। लदोडी दे पठानिए पैहलें ई फिरोजपुर जाई के अंग्रेजां तों नूरपुरे दा किला तड़आणें च मद्द करी चुकियो थे, तिन्हां दा नेता 'तेगा' था, जेहड़ा आपणें चाली आदमी लई के 'वारेन' कन्नें मिलिया था। उदे बदले च १६०८ रुपये दी जागीर अंग्रेजां प्रदान कीती थी। होर वी चौधरी लोक पठानकोटे च हजारां घमां दी जागीर अंग्रेजां तों लैणें च सफल होए।*

किसी भी ढंग से अंग्रेजों की राम सिंह पठानिया जी को पकड़ने की चाल सफल हो गई। इस स्वतन्त्रता सेनानी को

---

*शीराजा डोगरी Vol, 21 No., 4

अंग्रेजों ने पूजा-पाठ करते हुए धोखे से पकड़ लिया। वज़ीर राम सिंह पठानिया को पकड़ने के लिए जब अंग्रेज सैनिक आगे बढ़े तो उन्होंने पूजा-पाठ वाले पानी से भरे हुए गढ़वे को अपने खद्दर के तौलिए में लपेट कर अंग्रेजी सैनिकों पर बारी-बारी पटका जिससे पांच अंग्रेजी सैनिक मारे गए। अन्त में वज़ीर राम सिंह को बन्दी बना लिया गया। अंग्रेज वज़ीर राम सिंह को 'ममूण-मरोली' के रास्ते पठानकोट ले गए। अंग्रेजों ने राम सिंह के पिता जी शाम सिंह को सन्देश भेजा कि यदि वह अपने बेटे से मिलना चाहें तो मिल सकते हैं। उस समय वज़ीर शाम सिंह नूरपुर हनुमान के मन्दिर में तपस्या करके आ रहे थे। सन्देश वाहक ने उन्हें कहा, 'वज़ीर साहब, राम सिंह जी अंग्रेजों द्वारा पकड़े गये हैं और अंग्रेजों ने सन्देश भेजा है कि यदि आप अपने बेटे से मिलना चाहें तो मिल सकते हैं'। इस बात को सुनकर वज़ीर शाम सिंह की आंखें क्रोध से लाल हो गईं बोले, 'क्या वह जीवित पकड़ लिया गया है या मृत'? इस बात को सुन कर कासद, बोला, महाराज 'वज़ीर राम सिंह साहिब सवार्ग हैं और जीवित पकड़ लिए गए हैं' वज़ीर शाम सिंह ने जब कासद से यह बात सुनी तो वह सन्न रह गए और कुछ देर चुप रहने के उपरान्त कड़क कर बोले, 'जाओ और जा कर अंग्रेज से कह दो कि मेरा बेटा जीवित पकड़ा गया है इसलिए मैं उस से मिलना नहीं चाहता।

अंग्रेज अब राम सिंह जी को लेकर कांगड़ा पहुंचे। वहां इस स्वतन्त्रता सेनानी पर फौजी मुकद्दमा चला और राम सिंहजी को फांसी की सज़ा दी गई। सज़ा देने से पहले अंग्रेज अधिकारी ने उन से पूछा, 'वज़ीर राम सिंह, यदि तुम्हें छोड़ दिया जाए तो तुम क्या करोगे?' इस बात को सुन कर वज़ीर राम सिंह बोले, 'यदि मुझे छोड़ दिया जाए तो मैं आज़ादी के लिए तब तक लड़ूंगा जब तक मैं जीवित रहूंगा' वज़ीर राम सिंह की यह बात सुनकर अंग्रेजों ने उन की फाँसी की सज़ा काले-पानी में बदल दी। वज़ीर राम सिंह को रंगून जेल में भेजा दिया गया। रंगून जेल में कई यातनाएं और दुःख सहने के

उपरान्त स्वतन्त्रता सेनानी वज़ीर राम सिंह पठानिया जी सन् 1849 को स्वर्ग सिधार गए। जसवां के राजा उमीद सिंह और उनके बेटे जय सिंह जिन्होंने इस लड़ाई में भाग लिया था को अंग्रेजों ने अल्मोड़ा की जेल में भेज दिया। दातारपुर के राजा जगत सिंह को भी अल्मोड़ा की जेल काटनी पड़ी और वह वहां पर १८७७ ई० में स्वर्ग सिधार गए। वर्ष १९०१ के काँगड़ा गज़टियर में इन स्वतन्त्रता सेनानियों के लिए गोरों ने लिखा है 'राम सिंह पठानियां ने ४०० युवक जो आस-पास के गांवों तथा उसके परिवार के सदस्य थे, वे सब के सब बेकार चरित्रहीन तथा आवारा थे। उन्हें हार जीत से कोई मतलब ही नहीं था' यह बात अंग्रेजों ने स्वतन्त्रता सेनानियों से तंग आकर लिखी होगी।

यह थे भारत के प्रथम स्वतन्त्रता सेनानी वज़ीर राम सिंह पठानिया जिन्होंने सन् 1857 ई० के स्वतन्त्रता संग्राम से पूर्व सन् 1848 ई० में ही अंग्रेजी साम्राज्यवाद के विरुद्ध अपनी 'चण्डी' नाम की तलवार (पच्चीस सेर वजनी) उठाई और पहाड़ी राजाओं तथा सिक्खों का गठ-जोड़ कर के यह युद्ध लड़ा। हिमाचल प्रदेश में जन्मे भारत माता के इस सुपूत को कौन भारत वासी भूल सकता है?

★ ★ ★

हिमाचल अकादमी के नए प्रकाशन

1. **पहाड़ी-हिन्दी-शब्दकोश** 125-00
2. **साहित्यकार कलाकार विवरणिका** 30-00
3. **नवीद-ए-सहर (उर्दू)** 35-00
4. **Distant Echoes (Stories)** 40-00

★ ★ ★

राम सिंह पठानियां—हिमाचल प्रदेश का प्रथम स्वतन्त्रता सेनानी

राजेश चौहान

राम सिंह पठानियां की जीवन-कथा इतिहासकारों के लिए बड़ी रूचिकर है क्योंकि इसके द्वारा हमें मालूम होता है कि नूरपुर के राजपूतों ने किस प्रकार से अंग्रेजों का विरोध किया। रामसिंह पठानियां का जन्म कब हुआ यह कहना कठिन है परन्तु फिर भी हम तथ्यों के आधार पर उनकी जन्म तिथि निश्चित कर सकते हैं जोकि उन्होंने स्वयं अपने मुकद्दमों के समय उद्धृत किए हैं। रामसिंह स्वयं अपने मुकद्दमें में कहते हैं कि जब वह 6 साल के थे तो उन्होंने रणजीत सिंह के दरबार में जाना शुरु किया और उन्हीं राजा की कृपा तथा स्नेह के कारण वह बड़ा हुआ। दूसरी जगह रामसिंह यह कहते हैं कि वह 30 साल तक महाराजा रणजीत सिंह तथा खालसा के नौकर रहे और फाल्गुन 1849 में अंग्रेजों द्वारा बन्दी बनाये गये।*

ऊपरलिखित तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि रामसिंह पठानिया का जन्म लगभग 1812 ई० में गांव बासा (नूरपुर) के राजपूत परिवार में हुआ। उनके पूर्वज नूरपुर के राजाओं के खानदानी वजीर थे। राम सिंह के पिता का नाम वजीर शाम सिंह तथा माता का नाम श्रीमती इन्दौरी था।

19वीं शताब्दी के मध्य में कांगड़ा क्षेत्र में स्थित नूरपुर पहली रियासत थी जिसने रामसिंह के नेतृत्व में अंग्रेजों के

*फारेन पॉलिटिकल कन्सल्टेशनस, तिथि 20 अक्तूबर, 1849, न० 113

कुशासन के विरुद्ध स्वाधीनता की लड़ाई लड़ी। उस समय अंग्रेजों की उत्सुकतापूर्ण नज़र पंजाब कौर यहां तक कि सम्पूर्ण भारतवर्ष को अपने अधीन करने की थी। यह अवसर उन्हें प्रथम ऐंग्लो-सिक्ख युद्ध में सिक्खों की पराजय के कारण प्राप्त हुआ। प्रथम ऐंग्लो-सिक्ख युद्ध की समाप्ति पर लहौर में 9 मार्च, 1846 ई० में एक शान्ति सन्धि पर हस्ताक्षर किए गए जिसके अनुसार अंग्रेजी सरकार को जालन्धर-दोआब, ब्यास तथा सतलुज नदियों के बीच का पहाड़ी क्षेत्र प्रभुत्व के रूप में प्रदान किया गया। अंग्रेजों ने युद्ध की क्षति पूर्ति के रूप में 1 करोड़ 50 लाख रुपयों की भी मांग की। लाहौर दरबार ने इस मांग को पूरा करने लिए 50 लाख रुपये नकद दिए। शेष एक करोड़ की राशि के बदल में ब्यास तथा सिन्ध के मध्यवर्ती भाग, जिनमें कश्मीर तथा हज़ारा भी शामिल थे, अंग्रेजों को सौंप दिए। अंग्रेजों ने इन प्रदेशों को पहाड़ी राजाओं को देने के बजाय सतलुज तथा रावी के बीच के प्रदेशों को स्वयं रख लिया तथा शेष बचे प्रदेशों को जम्मू के राजा गुलाब सिंह को सौंप दिया।

काँगड़ा की पहाड़ी रियासतें इस भ्रम में थीं कि समझौते के अनुसार अंग्रेजी सरकार सभी राजाओं को उनके प्रदेश पुनः सौंप देगी परन्तु अंग्रेजों ने ऐसा नहीं किया जिसके परिणामस्वरूप वे विद्रोही बन गए। जब 1848ई० की ग्रीष्म ऋतु के आरम्भ में सिक्ख नेताओं ने उनके सामने विद्रोह का प्रस्ताव रखा तो वे विद्रोह में हिस्सा लेने के लिए उत्तेजित हो गए, जो उस समय अपनी चरम-सीमा पर पहुंच रहा था। उन्हें यह वचन दिया गया कि यदि अंग्रेजों को पंजाब से बाहर निकाल दिया गया तो उन्हें उनके राज्य पुनः सौंप दिए जायेंगे। राम सिंह पठानियां ने अंग्रेजी सरकार के अत्याचारी शासन के विरुद्ध आवाज़ उठाई। उन्होंने काँगड़ा के पहाड़ी राजाओं के साथ सन्धियां की और अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा लहराया।

दूसरी तरफ अंग्रेज अपने राज्य-सम्बन्धी लाभ और युद्ध की कूटनीति से सम्बन्धित कुल्लू-कांगड़ा के महत्त्वपूर्ण क्षेत्र से पूरी

तरह सचेत थे और वे इन्हें जल्दी से जल्दी अपने अधीन करना चाहते थे। अंग्रेजी सरकार इन क्षेत्रों और प्रदेशों को लेते समय इस तथ्य से पूर्ण आश्वस्त थी कि उस क्षेत्र के सारे राजपूत राजा सिक्खों के विरोधी हैं और वे अंग्रेजों का सशस्त्र स्वागत करेंगे। किन्तु हिमाचल प्रदेश के राजपूत अंग्रेजों के उद्देश्यों से भली प्रकार परिचित हो गये थे। इस कारण से अंग्रेजों को राम सिंह के नेतृत्व में स्थानीय लोगों और वहां पर सिक्खों द्वारा नियुक्त अधिकारियों तथा सेनाओं से कठोर अवरोध का सामना करना पड़ा। इस नाजुक समय में अंग्रेजी अधिकारी विशेषकर ईरसकिन, जो पहाड़ी राज्यों के लिए कार्यकारी निरीक्षक था, ने पहाड़ी राजाओं को सिक्खों के विरुद्ध विद्रोह के लिए यह वचन देकर उकसाया कि इसके लिए उन्हें पर्याप्त रूप से पारितोषिक दिया जायेगा। इस कारण से 1846-47 ई० के दौरान कुछ पहाड़ी राजाओं ने सिक्खों के विरुद्ध अंग्रेजों की सहायता की। प्रायः इस भ्रमित विचार से कि वे सिक्खों की अपेक्षा अंग्रेजों के अधीन अपनी ही रियासतों के अन्तर्गत अधिक सुविधाओं का का उपभोग कर सकेंगे। नूरपुर के राजा उनमें से एक थे। परन्तु राजा को आश्चर्य हुआ कि नूरपुर का खानदानी वजीर मियां शामसिंह और उसका लडका रामसिंह सिखों का साथ दे रहे हैं। इसलिए नूरपुर के राजा को सज़ा के तौर पर अंग्रेजों ने बीस हजार रुपये वार्षिक पैंशन निर्धारित की और बदले में उसके राज्य को अपने राज्य में मिलाने का निर्णय लिया। अंग्रेजों ने यह शर्त भी रखी कि नूरपुर के राजा को नकद पैंशन तभी प्राप्त हो सकती है यदि वह अपने खानदानी निवास को छोड़कर सतलुज के दूसरी ओर रहने का निर्णय ले। राजा को नाबालिग देखते हुए उस के वजीर रामसिंह और उसके पिता शामसिंह ने उपर्युक्त शर्तों को मानने से इन्कार कर दिया। एक साल छः महीनों तक पठानियां परिवार और अंग्रेजों का आपस में परामर्श चलता रहा परन्तु मियाँ शाम सिंह और उसके पुत्र रामसिंह ने अपने राजा के लिए उन असम्मानजनक शर्तों को मानने से इन्कार कर दिया। परिणाम-स्वरूप जालन्धर दोआब के कमीश्नर और सुपरिंटैनडेन्ट हिल

स्टेट्स जॉन लॉरेंस ने पहाड़ी राजाओं की ओर कठोर नीतियां अपनायी। सम्भवतः नूरपुर के राजा के लिए उसने अधिक निर्दयी शर्तों की घोषणा की।*

जॉन लॉरेंस इस बात के लिए मान गया कि नूरपुर का राजा जहां कहीं भी रहना चाहे रह सकता है परन्तु उसे मियाँ शामसिंह और उसके पुत्र रामसिंह को नौकरी से निष्कासित करना होगा। इसके अतिरिक्त जॉन लॉरेंस ने पेंशन के प्रस्ताव को घटाकर पांच हजार रुपये कर दिया। राजा को एक साल तक बिना किसी प्रबन्ध के रहना पड़ा और बाद में उसे उसी प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए विवश किया गया। अन्त में सरकार द्वारा पाँच हजार रुपये वार्षिक पेंशन नाबालिग राजा जसवन्त सिंह और दो हजार रुपये वार्षिक पेंशन बीर सिंह की विधवा पत्नी के लिए स्वीकृत की गई तथा साथ में यह स्वीकृति भी दी गई कि जहां कहीं वे रहना चाहें रह सकते हैं। अंग्रेजों ने बासा परगना (नुरपुर) की जागीर को जब्त कर लिया, जिसका मूल्य एक हज़ार रुपये वार्षिक था और जिसका मियाँ शाम सिंह का कुटम्ब कई पीढ़ियों से उपभोग कर रहा था। अंग्रेजों द्वारा शामसिंह और रामसिंह को उनके राजा तथा उनकी माता से मिलने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। पठानियों तथा स्थानीय लोगों द्वारा दबाब डाले जाने पर जॉन लॉरेंस को यह मानने पर विवश किया गया कि मियाँ शाम सिंह को उसकी आयु को देखते हुए निर्दोष समझना चाहिए और उसे शांतिपूर्वक रहने की अनुमति दे देनी चाहिए। उसने लोगों की इस बात को मान लिया परन्तु उसने रामसिंह को यह छूट देने से मना कर दिया।* राम सिंह ने अंग्रेजों की ललकार को स्वीकार किया और अंग्रेजों का विरोध करने के लिए अपने लोगों को संगठित किया। 1846 ई० के

---

* **फॉरेन पॉलिटिकल कन्सल्टेशनस**, तिथि 20 अक्तूबर, 1849, नं० 113

**वही।

आरम्भ में जब अंग्रेजी सेनाएं लाहौर दरबार की दुर्ग-रक्षक सेनाओं के विरुद्ध मण्डी, कुल्लू और अन्य स्थानों पर युद्ध में व्यस्त थी तो उस समय रामसिंह ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह किया और अपने क्षेत्र के राजपूतों को लाहौर दरबार के घिरे हुए दुर्गरक्षक सैनिकों के पक्ष में युद्ध करने के लिए उत्तेजित किया।

सिक्खों के दुर्गरक्षक सैनिक लम्बे समय तक अंग्रेजों का विरोध न कर सके और उन्हें अंग्रेज़ों के सामने आत्मसर्मपण करना पड़ा। परन्तु रामसिंह फिर भी ऊना के बाबा बिक्रम सिंह, रोपड़ के राजा और उन क्षेत्रों के अन्य प्रभावशाली लोगों की सहायता से लाहौर दरबार की निरन्तर सहायता करता रहा। इसी बीच 1847-48 ई० में पंजाब में ब्रिटिस विरोधी शक्तियां पर्याप्त बल इकट्ठा करने में सक्षम हो गई और उन्होंने मुलतान के गर्वनर दीवान मूलराज, हज़ारा के गर्वनर सरदार छत्तरसिंह अटारीवाला और उस समय के आदरणीय सिख सन्त भाई महाराज सिह के नेतृत्व में अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह छेड़ दिया।

अप्रैल 1848 ई० में रामसिंह को कांगड़ा के पहाड़ों से भगा दिया गया। उनके पिता शामसिंह को उनकी आयु को देखते हुए निर्दोष समझा गया और उन्हें शान्तिपूर्वक रहने की अनुमति दे दी गई।परन्तु रामसिंह को कोई भी छूट नहीं दी गई। रामसिंह ने अपने मुकद्दमें के समय यह कहा था कि अंग्रेजी सरकार ने उन्हें उपद्रवी चरित्र वाला कह कर निन्दित किया, उनकी जागीर को छीन लिया और उनके पद को समाप्त कर दिया। निराश होकर उन्हें पहाड़ों को त्यागना पड़ा, लगभग उस समय जबकि पंजाब में दीवान मूल राज अंग्रेजों का विरोध कर रहा था और वहां विद्रोह काफी फैल चुका था।*

---

* **फॉरेन पॉलिटिकल कान्सल्टेशनस,** तिथि 20 अक्तूबर, 1849 नं० 110-118

3 सितम्बर, 1848 ई० को राम सिंह अपने कुछ साथियों के साथ ब्रिटिश प्रदेश में, रावी के किनारे स्थित शाहपुर के निर्जन किले में दृष्टिगोजर हुए। अपने साथियों के साथ किले की रक्षा के लिए सेना नियुक्त करने के उपरान्त राम सिंह ने ढोल बजाकर यह घोषणा की कि आज से नूरपुर की रियासत पर उनका अधिकार हो गया तथा नूरपुर का शासक बीर सिंह का पुत्र जसवन्त सिंह है और मैं राम सिंह उनका वज़ीर हूं। इस विद्रोह का समाचार होशियारपुर पहुंचा और इससे पहले की अंग्रेज़ी सेनाएं कांगड़ा की ओर कूच करे सी० बी० सौनदर ने कैप्टन डेबिडसन् और मेज़र फ़ीशर के साथ मिलकर किले पर चढ़ाई कर दी।* परन्तु रामसिंह अपने साथियों के साथ पिछली रात ही बासा के पहाड़ों की ओर चला गया। यह जगह घने जंगलों से घिरी हुई थी और रामसिंह ने यहां अपना मोर्चा लगाया, सन्तरियों को हथियार सहित नियुक्त कर के, सभी मार्गों पर अपना अधिकार किया और प्रभावशाली लोगों को लिखित सन्देश भेजे कि वे उसकी सहायता करें। 3 सितम्बर से लेकर 18 सितम्बर तक रामसिंह ने अपने स्थान को कुछ वचन देकर, कुछ धमकियों द्वारा और कुछ हिंसा का सहारा लेकर सम्भाले रखा। वह आस-पास के गांवों से लगभग 500 पुरुषों को इकट्ठा करने में सफल हुआ, जिनमें कि कुछ राजपूत उसकी अपनी बिरादरी के थे। शीघ्र ही जॉन लॉरेंस (कमिश्नर) और बारन्स (डिसट्रिक आफिसर) सैनिकों के साथ रामसिंह की ओर आए। 18 सितम्बर की सुबह रामसिंह को थोड़ी-सी मुठभेड़ के बाद उनके मोर्चे से बाहर निकाल दिया गया। जो सेना उनको हटाने के लिए भेजी गई, उस पर ऊपर से गोलियां चलाई गई जिससे अंग्रेजों का एक सैनिक मारा गया और नौ घायल हो गए। रामसिंह भागने में सफल हुए और उन्होंने रामनगर (गुजरात) में राजा शेरसिंह के शिवर में शरण ली।**

*फॉरेन पॉलिटिकल कन्सलटेशनस, तिथि 20 अक्तूबर, 1849 न. 110-118. और देखें जी० सी० बारन्स, **कांगड़ा सेटलमेंट रिपोर्ट** (लाहौर, 1855), पृ० 48.
**वही।

3 जनवरी, 1849 ई० को वह दोबारा शाहपुर में दो सैनिक टुकड़ियां (प्रत्येक 500 सैनिकों की) और 100 घुड़सवारों के साथ दृष्टिगोचर हुए। इन टुकड़ियों को उन्होंने परिश्रम द्वारा शेरसिंह से कांगड़ा के पहाड़ों में विद्रोह करने के लिए प्राप्त किया था। इस धावे में उन्होंने शाहपुर के चौधरियों पर 1300 रुपये और गांव कोट के लम्बरदारों पर 60 रुपये का कर लगाया। शाहपुर से वह दोबारा गया और कैप्टन विलियम तथा मिलवित (सहायक कमिश्नर) के नेतृत्व में सरकारी सेनाओं का मुकाबला किया। छोबारा से वह धल्ला की धार गया। यह स्थान ब्रिटिश सेनाओं के जोश तथा साहस के सिवाय न जीते जाने योग्य था। उसकी सुरगली में स्थित अंग्रेज़ी सेनाओं से भिड़न्त हुई। दोनों पक्षों का थोड़ा-बहुत नुक्सान हुआ, परन्तु रामसिंह ने अंग्रेजों के 20 सैनिकों को बन्दी बनाया जिनमें कि 6 घायल सैनिक भी सम्मिलित थे। उनमें से 14 सैनिकों को उसने खाना खिलाने चे बाद छोड़ दिया और उसने प्रत्येक सैनिक को एक रुपया उनकी रैजिमैन्ट के लिए दिया। घायल हुए 6 सैनिकों को उन्होंने अपने पास रखा और उनके घावों को शीघ्र भरने के लिए उन्होंने पूर्ण प्रयास किए। 16 जनवरी, 1849 ई० को जनरल व्हीलर अपनी सम्पूर्ण सैनिक शक्ति के साथ ऊपर आया और दोनों पक्षों में लड़ाई शुरु हुई। दोनों पक्षों को काफी क्षति हुई और अन्त में रामसिंह को उनके मोर्चे से खदेड़ा गया। इस युद्ध में रामसिंह की सेना के एक अधिकारी (कामांडैन्ट), दो सूबेदार, एक नायब सूबेदार और कुछ सिपाही मारे गए। दूसरी तरफ अंग्रेज सेना के सिक्ख रेजिमैन्ट के लेफ्टिनैन्ट पील और 7वीं कावेलरी के कारनट क्रिसटाई भी इस युद्ध में मारे गए।*

जॉन पील की प्रतिष्ठा में धल्ला की धार से 2 कि. मी. की दूरी पर स्थित माटीकोट के स्थान पर एक स्मारक

*फारेन पॉलिटिकल कन्सल्टेशन्स, तिथि 20 अक्तूबर, 1849, न. 110-118.

बनाया गया, जोकि छोटी पहाड़ी के शिखर पर बनाया गया है और चारों तरफ घनी झाड़ियों से घिरा हुआ है। इस शिला-लेख पर अंग्रेजी में निम्न खुदाई की गई है—

"यह स्मारक पहली सिक्ख लोकल इनफैन्टरी के लेफ्टिनैन्ट जॉन पील की प्रतिष्ठा में बनाया गया है। जोकि 16 जनवरी को रामसिंह के साथ धल्ला के समीप हुई मुठभेड़ में अपने साथियों का वीरता से नेतृत्व करते समय घायल हुआ और 17 जनवरी, 1849 ई. को उसकी मृत्यु हुई। इस स्मारक को उसकी याद में सिक्ख रेजिमैन्ट के अधिकारियों ने बनाया।*"

इस युद्ध में रामसिंह तथा उनके साथियों की हार हुई और वे माओ के जंगल की ओर भाग गए। जब वे माओ की ओर जा रहे थे तो रास्ते में उनकी मुठभेड़ पुनः अंग्रेजी सेनाओं से हुई, परन्तु अंग्रेजी सेना उन्हें रोकने में सफल नहीं हुई। रामसिंह की सैनिक टुकड़ियों ने और लड़ाई लड़ने से मना कर दिया। इसलिए रामसिंह उन्हें रावी के दूसरी ओर ले गया और वहाँ उसने उनको कहा कि वे जहां जाना चाहें जा सकते हैं। स्वयं वह फकीर बन गया और जब वह प्रसिद्ध तीर्थस्थान पुर्मण्डल की ओर जा रहा था, तो जम्मू के महाराजा गुलाब सिंह के कुछ सिपाहियों ने उन्हें पहचान लिया और जसरोटा में उसे पकड़ लिया। रामसिंह को बेड़ियों में बांध कर कांगड़ा लाया गया और वहां उन पर जी. सी. बारन्स द्वारा मुकद्दमा चलाया गया। रामसिंह को कांगड़ा के पहाड़ी राज्यों में अराजकता फैलाने के लिए मृत्युदण्ड दिया गया परन्तु अंग्रेजी सरकार से स्थानीय लोगों ने बार-बार यह आग्रह किया कि उनकी सजा को कम किया जाए। इसलिए अंग्रेज सरकार को पुनः अपने निर्णय पर विचार करना पड़ा। विचार- विमर्श के बाद अंग्रेजी सरकार ने रामसिंह को आजीवन कारावास की सजा सुनाई और उन्हें बर्मा भेज दिया गया। वहां उन्हें माऊलमें जेल

* गज़िटियर ऑफ गुरदासपुर डिस्ट्रिक, (लाहौर, 1914), पृ. 20-21

में बन्दी बनाकर रखा गया और वहीं 11 नवम्बर 1856ई. में उनकी मृत्यु हुई।*

राम सिंह का नाम आज भी हिमाचल प्रदेश में प्रथम स्वतन्त्रता सेनानी के रूप में याद किया जाता है जिसने कि नूरपुर रियासत को अंग्रेजी कुशासन से स्वतन्त्र कराने के लिए अपना तन, मन, धन सभी कुछ न्यौछावर कर दिया। उनकी माता इन्दौरी ने उन्हें बार-बार समझाया कि तू अपनी सुन्दर पत्नियों के लिए रुक जा और अंग्रेजों के साथ लड़ाई मत कर, क्योंकि यह लोग बहुत दुराचारी हैं और तुझे पकड़ कर कैद में डाल देंगे तथा हमारा घर-बार नीलाम कर देंगे तो उस समय रामसिंह ने अपनी माता को जवाब दिया था कि वह उसे आज के दिन छोड़ दे क्योंकि उन्होंने अंग्रेजों के साथ युद्ध करना है और नूरपुर को स्वतन्त्र करके ही छोड़ना है।** दूसरी ओर अंग्रेजों ने उनकी जागीर को छीन लिया और यहां तक कि उन्हें अपने राजा तथा रानी से भी नहीं मिलने दिया। वह दर-दर भटकता रहा परन्तु उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और अन्तिम सांस तक अंग्रेजों का विरोध करते रहे। इस प्रकार हम देखते हैं कि रामसिंह ने अंग्रेजों के सामने कभी भी अपना सिर नीचा नहीं दिखाया। रामसिंह में देशभक्ति की भावना कूट-कूट कर भरी थी और इसके लिए उन्होंने अपना सभी कुछ न्यौछावर कर दिया। उनके पराक्रम के गीत आज भी लोगों द्वारा कांगड़ा क्षेत्र में बड़े गर्व से गाए जाते हैं।

इस भूमि का पहला सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह रहा कि राम सिंह के सफल अभियान के मध्य में उनसे आन्तरिक विश्वास-घात किया गया। दूसरे उस समय के गुलेर के राजा शमशेर चन्द ने अंग्रेजों की सहायता की और उन्हें सारी व्यूह-रचना

* फारेन पॉलिटिकल कन्सल्टेशनस, तिथि 20 अक्तूबर, 1849, नं. 113 और तिथि 2 जनवरी 1857, नं. 91-93

** सी. एच. डोनाल्ड और अन्य, 'द बैलिड ऑफ रामसिंह' टू रिबेलियनस (1848-49), ईडिटिड बाय टी ग्राहम बैली, जरनल ऑफ पंजाब हिसटोरिकल सोसायटी, वालयूम VIII, नं. 1, 1920

के रहस्यों के बारे में बता दिया। यहां तक कि जम्मू के महाराजा गुलाब सिंह ने भी अंग्रेजों को सहायता प्रदान की। इन कारणों के फलस्वरूप रामसिंह के स्वतन्त्रता के स्वप्नों को मरणात्मक आघात पहुंचा।

इस स्वतन्त्रता सेनानी के स्मरणार्थ नूरपुर तहसील के देहरी में स्थानीय जनता ने उनके नाम पर एक महाविद्यालय चलाया। यह महाविद्यालय 1971 ई० में आरम्भ किया गया और इसकी नींव बाथू मन्दिर के महन्त पुरुषोतम दास द्वारा रखी गई। यह महाविद्यालय वज़ीर रामसिंह मैमौरियल पब्लिक कालेज, देहरी के नाम से प्रसिद्ध है। कामरेड राम चन्द्र और ज्ञान सिंह पठानियां ने समाज सुधारक होने के नाते इस संस्था के लिए धन इकट्ठा किया। अब इसका प्रबन्ध कार्य हिमाचल प्रदेश सरकार ने अपने हाथों में ले लिया है।

नोट :— विस्तार के लिए देंखे — इसी लेखक द्वारा लिखित एम. फिल. का शोध कार्य, **रामसिह पठानियां-ए पायोनीर फ्रीडंम फाईटर ऑफ हिमाचल प्रदेश**, इतिहास विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला-5

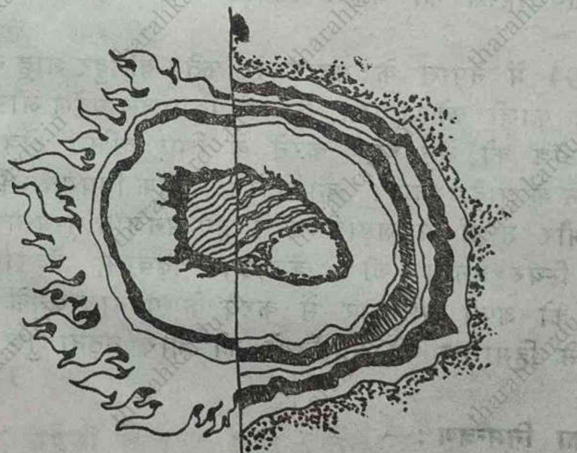

मलॉण की लड़ाई

मेजर श्यामसिंह विष्ट

बिलासपुर (कहलूर) और नालागढ़ (हण्डूर) हिमाचल प्रदेश के शिमला की सुरम्य पहाड़ियों में छोटी रियासतें हैं। इन दोनों रियासतों के शासक चन्द्राल परिवार और यदु राजवंश के वंशज थे। वे मूलरूप से चन्देरी से आये थे। शक्ति तथा महत्त्वाकांक्षा के प्रति मोह और लालच ने उनके मध्य एक खाई सी बना दी थी यह उस समय तक बढ़ती रही जब तक कि एक गतिरोधात्मक राज्य की उत्पत्ति नहीं हो गई।

1970 ईसवी के दौरान हण्डूर (नालागढ़) के राजा रामसरनसिंह तथा कांगड़ा के राजा संसारसिंह ने कहलूर के (बिलासपुर) एक विशेष हिस्से को अपनी रियासत में जोड़ लिया।

1794 में नेपाल के महाराजा फतेह बहादुर शाह ने जनरल अमरसिंह काजी को गढ़वाल, कुमाऊं, हिमाचल प्रदेश और कश्मीर तक के क्षेत्र को अनुबद्धित करने के लिए दक्षिण क्षेत्र की ओर कूच करने के आदेश दिए। काजी ने प्राकृतिक विषमताओं, अज्ञात शत्रुओं और तत्वों से लड़ाई करते हुए अनजान भू-भाग की ओर तेजी से स्थिर प्रगति की। कुमाऊं, गढ़वाल, देहरादून की सीमाओं को अपने अधिकार में करने के पश्चात् उसके सैन्यदल ने तेजी से हिमाचल की पहाड़ियों की ओर बढ़ना शुरू किया।

गोरखों का निमन्त्रण :—

कहलूर के राजा ने अपने खोए हुए राज्य क्षेत्र को पुनः प्राप्त करने के इरादे से जरनल अमरसिंह से सम्पर्क स्थापित

किया कि वे उसके बचाव के लिए आए। वे (अमरसिंह) सहमत हो गया और महान योद्धा गोरखों ने इस कठिन कार्य को सफलता पूर्वक करके बिलासपुर के खोए हुए सीमा क्षेत्र को पुनः प्राप्त करके राजा के सुपुर्द कर दिया।

गोरखों ने अपनी इस सफलता को शोषित करना शुरू कर दिया और एक वर्ष के भीतर सन् 1803 में रतनगढ़,, सूरजगढ़, मलौण, दयोथल और क्याली जैसे सामरिक महत्त्व के पहाड़ी क्षेत्रों को अपने कब्जे में लेने के पश्चात् उन्होंने हण्डूर की राजधानी नालागढ़ की ओर बढ़ना शुरू कर दिया। रामगढ़ के किले की निगरानी चन्देलों द्वारा की जाती थी उन्होंने गोरखों के दृढ़ निश्चय के आगे तीन वर्ष तक के कड़े संघर्ष (युद्ध) के बाद आत्म-सम्पर्ण कर दिया।

अंग्रेज़ों का आगमन :—

1806 में हण्डूर के राजा अपने राज्य को तेजी से क्षीण होता देख कर बहुत ज्यादा निराश, हताश हुये। वे गर्बनर जरनल लार्ड लेक से मिले और बाद में जरनल आर्चंडली से लुधियाना में मिलकर उसे गोरखों की हस्तता की कहानी सुनाते हुए राजा कहलूर के साथ उनकी सांठ-गांठ के बारे में बताया। जरनल आर्चंडली ने उन्हें सहायता का वचन दिया और युद्ध की तैयारियां करने को कहा।

तीन महीने बाद आर्चंडली अपनी विशाल सेना के साथ हण्डूर सीमा में पहुंच गया। नालागढ़ गोरखों के कब्जे में था। ये सर्वविदित था कि गोरखे, पारम्परिक बहादुरी, शौर्य और दृढ़ युद्ध भावना के मूर्त रूप थे। प्रथम मुठभेड़ में ही सफलता का विश्वास तथा अपनी वरीयता को प्रमाणित करने के लिए पूरे तालमेल के साथ तोपों की अगण्य शक्ति को साथ लेकर एक अच्छी योजना बनाई गई।

अंग्रेजी सैन्यदल तथा उसके सहायक दल नवीनतम अग्नि अस्त्रों तथा तोपों से समुचित रूप से सुसज्जित थे। दूसरी ओर काजी के पास केवल मोहरें, खुखरियां तथा निर्भीक सैनिक

थे जिनमें स्त्रियां भी शामिल थीं। प्रशासन में सहायता करने के साथ-साथ गोरखा स्त्रियां अगले मोर्चों पर सैन्यदलों के साथ कंधे से कन्धा मिलाकर लड़ा करती थी। गोरखों के पास सुदृढ़ प्रशासन, योग्य नेता और लैफिटनैंट भगत थापा जैसे वास्तविक योद्धा थे। जनरल अमरसिंह को आशंका थी कि आक्रमणकारी देश की खाद्य सामग्री की तरफ आगे बढ़ेंगे, इसलिए उसने सर्तकता से अपनी सुरक्षा के लिए एक रैंज के बाद दूसरी रैंज पर कब्जा करने के बाद खाईबन्दी करके उसके इर्द-गिर्द कटघरा सा बना लिया। अग्नि अस्त्रों तथा सैन्यदल के अभाव को पूरा करने के लिए पत्थरों के ढेर लगा दिए ताकि उन्हें आवश्यकतानुसार आक्रमणकारियों पर फैंका जा सके, उनकी इस राजनीति ने अच्छा काम किया।

5 नवम्बर को सात दिनों के रक्तपात पूर्ण युद्ध के बाद प्रथम रैंज के साथ नालागढ़ तथा नालागढ़ के किले अंग्रेज़ों से छूट गए। इसके बाद रामगढ़ के किले क्षेत्र में गोरखों की स्थिति और भी मजबूत हो गई। अंग्रेज सैनिकों ने नाहर गांव में अपनी खाईबन्दी (किलेबन्दी) करने के लिए और बन्दूकों (तोपों) को रामगढ़ की श्रृखंला में ले जाने के लिए सड़क निर्माण का कार्य शुरु कर दिया, यह एक मुश्किल कार्य था। अमर सिंह की कुमुक रामगढ़ में तैनात थी। उसने व्यक्तिगत चौंकाने वाला आक्रमण करके एक ही बार में बहुत से अंग्रेज सैनिकों को मार दिया। तोपखाने का अधिकारी लैफिटनैंट जार्ज थामा भी मारा गया। उसकी समाधि स्तम्भ आज भी वहां पर है जिसे देखने वाले गोरखों के मनोबल को सरहाते हैं।

रामगढ़ जैसी मजबूत पकड़ को बिना परास्त किये किसी भी प्रकार आगे बढ़ना मुश्किल था। आगे बढ़ने वाले पैदल सैन्यदल के कृत संकल्प गोरखों द्वारा खड़ी की गई अत्यन्त कठिन बाधाओं को हटा कर उसे अपने कब्जे में लेना सम्भव नहीं था। एक ही विकल्प बाकी था कि किले को तोप के गोलों से छिन्न-भिन्न (तोड़) कर दिया जाए लेकिन तोपों को उस किले की रेंज में ले जाने के लिए सारे प्रयासों को गोरखों ने निष्फल

कर दिया। युद्ध के स्थान पर कपटपूर्ण नेतृत्व से आगे बढ़ना सम्भव था। गोरखों के ध्यान को दूसरी तरफ लगाने के लिए उसने बांयी तरफ से मलौण के किले पर आक्रमण कर दिया। इस प्रक्रिया ने गोरखों की शक्ति को बांट कर उसके सैन्यदल को निष्फल कर दिया।

कर्नल थामसन ने 14 सुदृढ़ कम्पनियों और एक तोपखाने को रामगढ़ की बांयी ऊंची रेंज पर ग्राधिपत्य करने के लिए नियुक्त किया गया रास्ता रात्रि भर में ठीक कर लिया गया ग्रौर तोपों को रामगढ़ की सीध में ऊंचे और विशाल (हाथी) गणपति टिले पर ले जाया गया तथा किले को ध्वस्त कर दिया। कर्नल कपूर ने रामगढ़ पर इस आक्रमण का नेतृत्व किया जो कि सम्भाव्य घटना की तरह 15 फरवरी 1815 को ग्रंग्रेजों के अधिकार में ग्रा गया। तत्पश्चात उन्होंने तारागढ़, चम्ब और जोर जोरू पर भी सफल आक्रमण किए।

ग्रंग्रेजों के पास सात सौ से ग्रधिक प्रशिक्षित और ग्रस्त्रों से सुसज्जित सैन्यदल तथा तोपखाना था जबकि जनरल अमरसिंह के पास 2500से कम ग्रादमी थे। इससे अमरसिंह की योग्यता (समर्थता) के बारे में साफ ज़ाहिर होता है कि वे नेता के रूप में ऊंचे जीवन (आत्मबल/चरित्र बल) वाला और अपने देश से दूर इतनी दारुण परिस्थितियों में स्वच्छ प्रशासक था। उसने सैनिक के रूप में अपने प्राकृतिक गुण को तथा दारुण परिस्थितियों में श्रेष्ठ स्थिति को निपुणता से प्राप्त करके अपने आप को युद्धनीतिज्ञ के रूप में प्रमाणित कर पिया।

गोरखों का मनोबल :—

नालागढ़, नाहन, देहरादून, तराई क्षेत्र जैसे नाजुक स्थलों को खोने से गोरखों को बहुत सदमा पहुंचा और उनका मनोबल गिर गया। ये केवल अगव्य सैन्यशक्ति तथा अस्त्र थे जिन्होंने गोरखों को मैदान छोड़ने पर विवश किया। यह सब तरह से प्रमाणित हो चुका था कि गोरखे युद्धकला में किसी से पीछे

नहीं। उनके छोटे शरीरों में बड़ा हृदय है। लड़ने की शक्ति चूकने तथा साधनों के पंगु होने पर और कोई भी कुमुक न मिलने की निराशा से हतोत्साहित और थकान से चूर होने पर भी अमरसिंह जैसा गोरखा कमाण्डर, हथियार डालने को राजी नहीं था। वह इसे गोरखा राष्ट्र के लिए कम महत्त्व तथा नेपाल के प्रति पूर्ण अविश्वास के रूप में लेता था उसने कुछ गोरखा सैनिकों जिनमें स्त्रियां भी शामिल थीं और जो खुखरियों से अगले मोर्चों पर पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़ा करती तथा गोरखा सैनिकों के साथ अन्त में युद्ध करने का निश्चय किया।

कुमुक प्राप्त करने की अन्तिम आशा लेकर उसने राजा गिरवान युद्ध विक्रमशाह को पत्र लिखा। पत्र दुर्भाग्य से अंग्रेजों के एजेन्टों द्वारा बीच में ही रोक लिया गया।

ई ब्रिटिस युद्धकला :—

यद्यपि अंग्रेज़ उच्च स्थान को प्राप्त करके अत्यन्त सुखद स्थिति में थे तथापि वे अदम्य गोरखों के विरुद्ध बाजी अर्जित करने में सक्षम नहीं हो सके, जैसे उनका तूफानी हमला अभी प्रारम्भ ही हुआ होगा और उन्हें उनका शौर्य डायन की तरह बार-बार याद आ रहा था। चपतींवरी खुखरी की काट उनके लिए एक दुःस्वप्न बन गयी थी।

जनरल ओक्टोरनोली अपने दल को भयभीत तथा अस्त व्यस्त करने की मनोवृति में नहीं था और वे विधिवत अग्रसर होने में योजनाबद्ध था। गोरखों की मजबूत पकड़ को दूर हटा कर अन्तिम विजय को प्राप्त करना सम्यक योजना का ठीक बर्ताव, सूचनाओं का एकत्रीकरण और सम्पादन, गोपनीयता अनु-रक्षण और शासनों के विभिन्न विवरणों में प्रतिभागी होना आवश्यक था। मुख्यस्थान की स्थापना रामशहर में की गई थी और वहां लम्बी अवधि तक रहने के पश्चात्, संग्रामिक एवं

शासकीय विवरण को योजनाबद्ध करने के उद्देश्य से व्यग्र प्रयत्न किए गये थे।

विभिन्न साधनों के सम्यक विवेचन के पश्चात्, युद्धनीतिज्ञ इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि तीन कांटेदार गमन मार्ग केवल एक मात्र सम्भावित एवं क्रियात्मक समाधान है। यह उपाय लड़ाकू गोरखों को विच्छिन्न करेगा और वे यह अनुमान लगाते रहेंगे कि किस दिशा से मुख्य आक्रमण हो रहा है। इस उपाय का परिपूर्ण होना और आपूर्ति का खण्डन प्रमुख प्रभावशाली पकड़ की पूर्ण नाकेबन्दी को सुनिश्चित करेगा।

अन्तिम उद्देय को प्राप्त करने के लिए यह निश्चित किया गया था कि कार्यवाही को निम्न दो चरणों में किया जाए :—

प्रथम चरण	कार्यवाही असन्नता
द्वितीय चरण	मुख्य आक्रमण

प्रथम चरण

सफलता को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से समस्त सैन्य बल को तीन सैन्य श्रेणी में विभाजित किया गया, आन्दोलन को दांए से बांए तरफ की दिशा के अभिमुख होकर बटने के उद्देश्य से दो सैन्य श्रेणियों को बनाया और आवरण अग्नि को उपलब्ध कराने, सफलता को पुन: समर्थ करने तथा दृढ़ता में सहायता करने के उद्देश्य से तृतीय सैन्य श्रेणी को बनाया गया।

बांई सैन्य श्रेणी कर्नल अरनोल्ड के अधीन सातगड़ों को अधिकार में प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रतिष्ठा के साथ आगे वढ़ी और स्वारघाट किला तत्पश्चात् रतनगढ़ किले की ओर से आगे बढ़ कर लाग घाट जोत को कब्जे में करने के उद्देश्य से शत्रुओं का अन्तर्करण कर पुर्नसमर्थन और आपूर्ति की सम्भावनाओं का खण्डन कर गोरखा रक्षक सेना मलौण के बायीं तरफ विशेष रूप से बिलासपुर से आगे बढ़ी।

दूसरी सैन्य श्रेणी जनरल ओबटोरनली के सुस्पष्ट निर्देश में बायीं तरफ से पार्श्व चक्करदार, मार्ग मोहारघाट की पगडण्डी पार करते हुए जयनगर से होते हुए और काहल्ली, शैली और कराओं के क्षेत्र में मजबूत आधार की स्थापना के उद्देश्य से प्रतिष्ठा से युक्त होकर आगे बढ़ी। इस लड़ाई में यह सुनिश्चित करना था कि अर्की और बिलासपुर से गोरखों की मुख्य प्रभाशाली पकड़ का खण्डन कर किसी प्रकार पुनसमर्थन और आपूर्ति न हो।

तीसरी सैन्य श्रेणी मध्य क्षेत्र से गम्भर नदी को पार कर सोरा से गुजरते हुए लोहरघाट से आगे बढ़ी। मौजूद पदचिन्हों को यह समुन्नत करना था कि प्रबल हाथी गणपत को सहायता से बड़ी-बड़ी बन्दूकें जिनका वजन लगभग 45 टन था को आगे की ओर खींचा जाए। प्रभावशाली नागरिकों ने एक नागरिक बल का भारी संख्या में सृजन किया था।

सेना टुकड़ियों का स्थान निर्धारण :—

जरनल अमरसिंह के रायला तथा दयोथल जैसे सामरिक महत्त्व की स्थिति को प्राप्त करने से मलौण तथा सूरजगढ़ में उसका प्रभुत्व फैल रहा था। मलौण के दोनों तरफ बहुत सी चौकियां थी। रायला तथा मलौण के किले के मध्य रेरी स्थित था जो कि बहादुर सरदार भगत थापा के आधिपत्य में था। नारायण कोट एक अन्य सहायतार्थ ली गई सैन्य चौकी थी। वहां कुल मिलाकर 2000 गोरखा सैनिक थे। चौकियां गिनती में नहीं थी उनके पास कुछ तोपखाना था परन्तु तोपें तथा अन्य नवीनतम अग्नि अस्त्रों के विरुद्ध अनगिनत पत्थर तथा खुखरियां थी। मलौण में उनका प्रशासनिक सैल था जहां गोरखा स्त्रियां प्रशासनिक रिर्पोट तैयार किया करती थीं। वे आगे के क्षेत्रों में गये हुओं के लिए खाना पकाती थीं, कपड़े धोती थी। सायं अगले मोर्चे पर पका हुआ खाना लेकर जाती थी और उनको उनकी डियूटी से मुक्त करती थी ताकि वे कुछ आराम कर सके।

करनल थामसन के अधीन बांयां स्तम्भ कुछ भी भाग्य पर न छोड़ता हुआ बड़े संयम से आगे बढ़ा। मध्यवर्ती क्षेत्र की उबड़ खाबड़ प्रकृति के कारण आगे बढ़ने की गति धीमी पर सर्तकता पूर्ण थी। यहां पर सात किलों 'सतगढ़' की एक कतार है-- जिसमें प्रत्येक गढ़ की स्थिति सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इन पर विजय पाना कोई सरल कार्य नहीं था परन्तु अपनी दूरदर्शिता तथा सुव्यवस्थित फौजी कार्यवाही के कारण उन्हें इस क्षेत्र में सफलता प्राप्त हुई। सुनियोजित फौजी कार्यवाही के उपरान्त स्वारघाट के प्रसिद्ध गढ़ पर विजय प्राप्त करके वे रतनगढ़ किले की ओर बढ़े। इस कुशल सामरिक युक्ति के फलस्वरूप नालागढ़ तथा बिलासपुर से मलौण की रक्षक सेना के आपूर्ति मार्ग अवरुद्ध हो गए।

जन० आक्टर्नली के अधीनस्थ कमान अर्थात् मुख्य आक्रणकारी सेना ने चक्रव्यूही युक्ति से बड़ी सावधानी तथा सुव्यवस्थित क्रम से धीरे-धीरे अपना मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने तमाम छोटी-बड़ी बाधाओं को पार करते हुए जयनगर से कुछ दूरी पर गम्भर नदी को पार करते हुए और बरियाधार की लम्बी तलहट्टी से होते हुए काहली शैली तथा कटाओ पहुंच कर वहां पर अपना सुदृढ़ अड्डा बना दिया। इस नियोजित अभियान के फलस्वरूप अर्की, सुबाथु और बिलासपुर से मलौण के लिए रसद तथा सेना की आपूर्ति रुक गई। मुख्य आक्रमण की प्रगति मध्य कॉलम की गतिशीलता पर निर्भर करती थी यह मध्य क्षेत्र में आगे बढ़ता है। तोपें खींचने के लिए उबड़-खाबड़ तथा बेकार रास्तों के कारण आगे बढ़ने की गति धीमी रही। उन्होंने रिवालसर और नायर होते हुए कुसरी का 'बाल' नामक स्थान पर गम्भर नाले को पार किया और विद्यमान रास्ते से नागरिकों पर नियन्त्रण करते हुए आगे बढ़े। रास्ते को चौड़ा किया गया और शक्तिशाली हाथी गणपत की सहायता से तोपों को खींच कर धीरे-धीरे आगे ले जाया गया। तोपें दुर्वहनीय और भारी थी, प्रत्येक तोप का भार 43 टन था।

दूसरा चरण :—

प्रथम चरण पूर्ण होने के उपरान्त तथा मुख्य फौजी कार्य-

वाही शुरु होने से पूर्व सैनिक बलों की तैनाती का पुनरावलोकन किया गया। एक के बाद एक गढ़ जीतते हुए बांयां कॉलम रतनगढ़ किले के परिसर में पहुंचा। काफी छीना-झपटी के उपरान्त दांये कालम ने अपना पक्का अड्डा बनाया और मुख्य सैनिक कार्यवाही को अन्तिम रूप दिया। मध्य कालम ने सड़क निर्माण तथा लोहमघाट क्षेत्र के लिए तोपें खींचने का कार्य किया।

फौजी कार्यवाही का संचालन :—

जन. ग्रावर्टलनी ने मलौण पर निम्न चरणों में फौजी कार्यवाही करने का निश्चय किया।

प्रथम चरण का उदेश्य :- रायला फीचर को अपने अधिकार में लेना था।

विधि:- फीचर पर निम्न प्रकार से तीन कॉलमों में आक्रमण किया जाना।

प्रथम कालम में रायला की बांई ओर की चोटी को लक्ष्य बनाया गया।

विधि :- लैफ्टिनैंट फंलीमिंग दो कंपनियों सहित पुरा के बांई ओर से यथा सम्भव गुप्त रूप से आगे बढ़ेंगे और अपनी प्रभावशाली स्थिति ग्रहण करके प्रातः हल्की गोलाबारी करके अपने पहुंचने की सूचना देंगे। सेना 13 अप्रैल, 1816 को मध्य रात्रि को इस मोर्चे को छोड़कर प्रस्थान करेगी।

द्वितीय चरण :- कैप्टन अमिल्टन अधीनस्थ तीन कम्पनियों सहित जयनगर होते हुए आगे बढ़ेगा और 14 अप्रैल, 1816 को सुबह होने से पूर्व 'चौहाना' क्षेत्र में संकेन्द्रित होगा और प्रथम कॉलम के संकेत पर रायला चोटी के दांए भाग पर आक्रमण करेगा।

तीसरे कॉलम का लक्ष्य सरसा फीचर :—

13 अप्रैल रात्रि को मेंजन जोन्स के अधीन एक पैदल बटालियन 'जोबी' के रास्ते से होकर चली तथा 'जावलूघाट'

में एकत्रित हुई। कालन न. 2 के साथ मिल कर 14 अप्रैल, सुबह तड़के निश्चित लक्ष्य प्राप्त करने के लिए धावा बोल दिया।

डी. दिवस 13 अप्रैल, 1816 (डी. दिवस से अभिप्राय है अभियान का दिवस) दूसरे चरण का उद्देश्य दयोथल तथा नारायण कोट को हथियाना था।

विधि :- निर्धारित स्थान को हथियाने के लिए दो कॉलम नियुक्त किए जाएगें।

कॉलम न. 4 का उद्देश्य दयोथल फीचर — मेजर लौरी की देख रेख में एक स्थानीय युनिट ने जोबी, बनाण तथा ढब से हो कर रात के समय रास्ता तय किया और 16 अप्रैल को तड़के ही धावा बोल दिया। रायला तथा सरसा फीचर सैनिक टुकड़ियों ने बांयी ओर से आक्रमण करने में सहायता ली।

कॉलम न. 5, उद्देश्य नारायण कोट :—

लैफ्टीनेंट कर्नल थामसन की देख-रेख में एक स्थानीय बटालियन तथा दो क्षेत्रीय टुकड़ियां जोबी, मलौण से होकर रात को पैदल रास्ता तय कर जाबल नामक स्थान पर एकत्रित हुई तथा जरुरत पड़ने पर कालम न. 4 को सुदृढ़ किया और अन्ततः नारायण कोट क्षेत्र को अपने कब्जे में ले लिया।
डी. दिवस (अभियान दिवस) 16 अप्रैल तृतीय चरण का उद्देश्य मलौण किले को कब्जे में लेना।

विधि :- वोयर के अधीनस्थ कालम न. 6 तथा कैप्टन शावर ने अधीनस्थ कालम न. 7 (दोनों सशक्त कम्पनियाँ) सहित जन० आक्टंनली के मुख्यालय से जक़ार की ओर प्रस्थान किया और उसके बाद अलग हो गई 'कॉंलगा' की तरफ प्रस्थान किया। इस तरफ के प्रस्थान का उद्देश्य गोरखों को यह अनुमान लगाने के लिए रखना था कि किस तरफ से आक्रमण होगा।

लैफ्टीनेंट कर्नल थामसन ने बन्दूकों सहित दो टुकड़ियों ने नारायण कोट क्षेत्र से अन्तिम लक्ष्य पर धावा बोल दिया।

अभियान दिवस 18 अप्रैल :—

पहले तीन कॉलमों में सुनियोजित ढंग से धावा बोल कर गोरखा सैनिकों को हैरान कर दिया तथा उन्होंने अपने आप को आक्रमणकारी फौजों से चारों तरफ से घिरा पाया। वे अच्छी तरह लड़े तथा दोनों ओर से काफी संख्या में सैनिक हताहत हुए।

दयोथल को कब्जे में लेने के लिए वर्तानवी फौजों को बहुत प्रयास करने पड़े। गोरखा सैनिक टुकड़ियां जो दुश्मन सैनिकों की भारी संख्या के मुकाबले में नाममात्र को थी ने दृढ़तापूर्वक युद्ध किया तथा दुश्मन की स्थिति का प्रतिवाद किया। उन्होंने पर्याप्त मात्र में शत्रु सैनिकों को हताहत किया। गोरखा स्त्रियां भी पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर लड़ी। यह मलौण की मुख्य सीमा चौकी थी तथा इससे हाथ धोने का सीधा अर्थ था मलौण किले को प्रत्यक्ष खतरा।

जब दयोथल पर अधिकार करना असंभव प्रतीत हो रहा था तो एक सायं एक अन्य योजना तैयार की गई। कर्नल थामसन को आदेश दिया गया कि वह अपनी सेना को दयोथल और मलौण किले के मध्य ले जाए। इस तहर से यह छल-कपट पूर्ण योजना अच्छी साबित हुई। दोनों ओर से दयोथल पर दबाव रहा। कुछ बर्तानबी टुकड़ियों ने 16 अप्रैल 1816 को दयोथल पर कब्जा कर लिया तथा दोनों ओर भारी मात्रा में सैनिक हताहत हुए।

अब अगला तथा अन्तिम उद्देश्य मलौण किला था। गोरखों को असुविधाजनक स्थिति में रखा गया। इस दवाब से बचने के लिए भागटे थापा ने वहाँ लगभग 1000 लोग इकट्ठे किये तथा 'जयदुर्ग' कहते हुए खुखरियों से दुश्मनों की चौकी पर धावा बोल दिया। जनरल अमरसिंह भी पीछे नहीं रहा, वह भी अपने लोगों के पीछे चलता रहा इस तरह से वह कई बार गोरखा ध्वज के साथ बन्दूक की रेंज में रहा। भागटा थापा हर स्थान पर अमने जवानों को प्रोत्साहित करता देखा गया लेकिन खोई हुई चौकी को फिर प्राप्त करने में असफल रहा।

इस खूनी लड़ाई के दौरान 500 गोरखों की जाने गई। निडर भागटा थापा भी मारा गया। 'बेरी' नामक स्थान पर जहां वह सीमा चौकी पर ठहरा था अभी भी एक बड़ा पत्थर है जिस पर कट लगा हुआ है। इस मुकाबले में किले में 350 प्रतिरक्षक मारे गए। 15 तथा 16 अप्रैल को दूसरी लड़ाई में बर्तानवी फौज के दो अधिकारी तथा 200 सिपाही मारे गए तथा 5 अधिकारी और 288 सिपाही घायल हुए।

मलौण किला ऊंची पहाड़ी पर 5000 फुट की ऊंचाई पर बनाया गया है। सामरिक दृष्टि से यह बिल्कुल उपयुक्त है। इसके तीन तरफ एक खड़ी चट्टान है तथा सुव्यवस्थित आक्रमण केवल दक्षिण दिशा से ही संभव था। यह एक बहुत बड़ा किला है जिसमें 2000 लोगों के रहने की क्षमता है। पानी एकत्रित करने के लिए किले के भीतर तालाब बने हुए हैं और दुर्गा मां का मन्दिर भी स्थित है।

जनरल आक्टर्नली ने अपनी स्थिति मजबूत कर ली तथा अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आक्रमण की तैयारी शुरू कर दी। यद्यपि किले में इतनी सेना नहीं थी फिर भी बर्तानवी सेना पूरी तैयारी किए बिना आक्रमण नहीं कर सकी। उस समय जब एक तरफ युद्ध की तैयारी हो रही थी तथा दूसरी ओर रामशहर की तरफ पूरे जोर से सड़क का निर्माण कर लिया गया था तथा दो बड़ी तोपें जिनका वजन प्रति तोप 42 टन था गणपत नामक प्रसिद्ध हाथी द्वारा आगे लाई। वे अभी भी किले में ही विद्यमान है। बर्तानबी फौजों ने मलौण किले को चारों ओर से घेर लिया।

उसी समय अल्मोड़ा के पतन का समाचार वहां पहुंचा तथा अमरसिंह के सरदारों ने जैतक नामक स्थान पर उसके पुत्र रणजोर के लिए शर्तें मानने के लिए अनुरोध किया। उसने आत्मसमपर्ण करने से इन्कार कर दिया तथा अन्त तक लड़ने का संकल्प किया।

भागटे थापा के मृत शरीर को रेशमी शाल में लपेट कर सन्देशवाहक के साथ किले में भेज दिया तथा शर्तें मानने

का प्रस्ताव किया। लेकिन उनके प्रस्ताव को ठुकरा दिया गया। भागटे थापा की दोनों पत्नियां उसके शव के साथ सती हो गई। बर्तानबी फौजों ने नारायण कोट तथा रेड़ी क्षेत्र में अपनी स्थिति को सुदृढ़ किया। उनके निष्कासन के लिए गोरखा टुकड़ियों ने उग्र प्रयास किए परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ और काफी लोग हताहत हुए। युद्ध में परास्त होने के समाचार के फैलने से दूसरे मोर्चे के लोग हतोत्साहित हो गए तथा अधिकारियों व सैनिकों ने जनरल अमरसिंह को छोड़ दिया। अब उसके पास केवल 150 लोग जिंदा बचे थे।

तोपों से अन्धाधुन्ध गोलाबारी की गई। किले की दीवारें ध्वस्त हो गई तथा किले के अन्दर के लोगों के हौंसले परस्त हो गए।

संत्रास को देखते हुए तथा नाकाबन्दी से तथा फौज को कुमुक न मिलने के कारण जनरल अमरसिंह के पास शेष बचे लोगों की जान बचाने तथा दुर्गा मां के पवित्र मन्दिर की रक्षा करने के लिए शर्ते मानने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं रह गया था।

अमरसिंह ने एक प्रतिष्ठित सन्धि की कि काठमांडू में जनरल की रिर्पोट के बहकावे में आकर भारत में बर्तानियों के विरुद्ध आवाज उठ रही है। शर्तों में संशोधन करने से इन्कार कर दिया। युद्ध जनवरी, 1816 में शुरू हुआ।

शान्ति वार्ता :-

नेपाल दरबार ने कुमांक तथा तराई क्षेत्र में और सेना टुकड़ियां भेजी इस अनुचित चेष्टा से बर्तानबी गुस्से में आ गए तथा उन्होंने सामयिक रणनीति तैयार की तथा अलमोड़ा को कब्जे में लेने के लिए भारी मात्रा में सैनिक भेजे। अलमोड़ा के पतन से तथा जनरल अमर सिंह काजी के समर्पण पर बहुत प्रभाव पड़ा। नेपाल दरबार ने दोबारा मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छा व्यक्त की जिसका बर्तानबी सरकार ते गर्म जोशी

से प्रतिदान किया। मई, 1816 में मेजर बराडशा के साथ नेपाल दरबार की शाही मोहर सहित गुरु गजराज निस्सर को बर्तानवी राजनीतिक ऐजेंट के रूप में भेजा गया। सुगौली नामक स्थान पर सन्धि पर हस्ताक्षर हो गए।

लॉर्ड हेस्टिग द्वारा आपेक्षित शर्तें निम्न प्रकार से थीं :—

(क) काली नदी के जीते हुए इलाकों का क्रमबद्ध स्थान्तरण कैसा।

(ख) शेष बचे गोरखा शासन क्षेत्र के साथ लगने वाली पूरी तराई की हदबन्दी करना।

(ग) गोरखों द्वारा सिक्कम राज्य क्षेत्र की तलहट्टी में जीते गए क्षेत्रों का परित्याग तथा हाजरी और नगरकोट के किलों की सभी वस्तुएं वापस लौटाना।

(घ) मार्ग रक्षियों तथा संस्थापन सहित एक आवासी का स्वागत करना तथा प्रथानुसार सरकार की विशेष अनुमति के बिना यूरोपियनों का स्वागत या सेवा न करना।

लैफ्टिनेंट रोबर्ट रोस ने 2000 सैनिकों का एक सैन्यदल गठित किया जिसमें जीते गए इलाकों के गोरखे भी शामिल थे। यह दल मलौण के पतन से पूर्व तक कार्यरत रहा। उसके बाद सुबाथू में एक रेजिमेंट का गठन किया गया जिसे 'फर्स्ट गोरखा मलौण रेजिमेंट" का नाम दिया गया। इसके उपरान्त लैफ्टिनेंट ग्रेडिक जनरल गिलस्पाईज ए० डी० सी० भी 2000 सैनिकों का एक सैन्यदल लेकर पहुंचे जिसका गठन देहरादून तथा नाहन के कैम्पों में शेष गोरखा दलों के युद्धबन्दियों में से किया गया था जिसका नाम "सैकंड गोरखा सिक्किम राईफल रखा गया"। तीसरी रेजिमेंट अलमोडा तथा चौथी .... डलहौजी में तैनात की गई।

जनरल सर डेविड ऑक्र्टनली के अधीन सैन्यदल फरवरी, 1814

दांया कॉलम : फर्स्ट ब्रिगेड — क० किगली -- 24वीं पैदल सेना

महारानी की 24वीं पैदल सेना	राईफलें	849
पहली बि० 18वीं देशी इन्फैन्ट्री		747
पहली बि० 21वीं ,, ,,		370
द्वितीय बि० ,, ,, ,,		437
द्वितीय बि० एल० आई०		1246
	योग	3649

मध्य कॉलम : मेजर जन० सर डेविड ऑक्र्टनली

तीसरी बि०			ले. क. मिलर	राईफलें	876
द्वितीय ,,	—	देशी	इन्फेन्ट्री	,,	784
,, ,,	—	,,	,,	,,	780
,, ,,	—	,,	,,	,,	890
,, ,,	—	,,	,,	,,	894
,, ,,	—	,,	,,	,,	805
,, ,,	—	,,	,,	,,	860
,, ,,	—	,,	,,	,,	815
प्रथम बि०	—	,,	,,	,,	425
				योग	7129

बांयां कॉलम :

द्वितीय बि०	लै० क० निकॉल	66 पैदल सेना
द्वितीय बि० 66वीं	राईफलें	762
5वीं ग्रिनेडियर बटालियन	,,	627
8वीं ,, ,,	,,	688
प्रथम बटालियन 8वीं देशी इन्फैंट्री	,,	724
द्वितीय ,, 1814 ,, ,,	,,	744
	योग	3545

कुल योग — 14,323   83 अदद तोपों सहित

कुछ प्रशस्तियां :—

अलौकिक परिस्थितियों के अनुकूल अपने काम को ढालने में उन्हें समय लगा, परन्तु नेपाली के सैनिक के लघु शरीर में बहुत बड़ा दिल होता है। उसमें अंग्रेजों वाली दृढ़निश्चय की विशेषताएं होती हैं। वह हर हालत में अपने रेंज वापस आने के प्रयत्न करता है और उसे उसके रेंज से दोबारा बाहर खदेड़ना सरल नहीं होता है। पहली घटना के उपरान्त वे अपने आप को संगठित करते हैं। वे प्रकृति से ही बहादुर तथा वफादार प्रकृति के होते हैं। जैसा कि मुझे ज्ञान है गोरखा मर मिटेगा परन्तु किसी से पीछे नहीं रहेगा।

जन. सर जेन्स विलॉक

"गोरखे युद्ध लड़ने का अवसर पाने पर मारे खुशी के कलाबाजियां खा रहे थे।"

एच. एच. ग्रेट हैड

वे युद्ध में खूंखार, बहादुर, किसी भी खतरे से निर्भीक यानि कि वास्तविक योद्धा प्रतीत होते हैं। सिपाही के रूप में किसी से कम नहीं हैं, साथ ही वे दृढ़ निश्चयी तथा अनुशासनाधीन परन्तु शेर की माफिक चौकन्ने होते हैं। वे बड़े जीवन से युद्ध करते हैं।

कैप. चार्ल्स ग्रिफिथ

हमें गर्व होगा यदि हम किसी काम आ सकते हों, चाहे वह काम कितना भी छोटा क्यों न हो। वास्तव में झगड़ों से हम महामहित तथा उनके राज्य के प्रति मैत्री और निष्ठा में कोई वृद्धि नहीं कर पायेंगे।

प्रधान मन्त्री सर चन्द्र शमशेर

●

पुस्तक समीक्षा

भेड़ का मुण्डन संस्कार

गुलशन कुमार

'भेड़ का मुण्डन संस्कार' डॉ० मनोहर लाल की सतरह हास्य-व्यंग्यमयी रचनाओं का संग्रह है जिसमें उन्होंने कई अवसरों पर भ्रष्ट राजनीति, दिशाहीन अध्ययन-अध्यापन आदि पर गहरे प्रहार करने में सफलता प्राप्त की है। अधिसंख्य लेख 'दैनिक ट्रिब्यून', 'नवभारत टाइम्स', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' आदि में प्रकाशित होकर पाठकों का मनोरंजन कर चुके हैं। 'देशसेवा की उम्र', 'हे नेताओ.... ....', 'एक चुनाव चिह्न की फरियाद', 'भेड़ का मुण्डन संस्कार' आदि लेख समकालीन राजनीति से

पुस्तक	: भेड़ का मुण्डन संस्कार
लेखक	: डॉ० मनोहर लाल
प्रकाशक	: हिमाचल पुस्तक भण्डार, 9/6935, गांधी नगर, दिल्ली-31
मूल्य	: 18/- पृष्ठ : 88

जुड़कर जहां अभावग्रस्त, निरीह, निरन्तर मुंडती जनता का खाका उभारते हैं वहीं उन नेताओं का भी जो मौसमी नारे उछालकर अपना उल्लू सीधा करने में ही अन्तिम सांस तक संलग्न रहते हैं। 'नेता छात्र का स्वागत भाषण' लेख शिक्षा-जगत् के अवमूल्यन पर टिप्पणी करता है तो 'मसिजीवी! तुम धन्य हो' लेख—प्रकाशक प्रपीड़ित लेखक की व्यथा-कथा का मार्मिक

अंकन करता हुआ पाठक को सोचने के लिए विवश करता है। 'अथ आधुनिक नायिका भेद' में कतिपय नवीन नायिका भेदों —'बस स्टैंडिनी,' -'ब्रॉब हेयरनी', 'लव अफैयरनी' आदि नायिकाओं की चर्चा के अतिरिक्त इस प्रकार के परम्परा--पुष्ट भेद-प्रभेद पर भी प्रहार किया गया है।

समग्रत: 'भेड का मुण्डन संस्कार' संग्रह जहां पाठक का मुण्डन नहीं करता वहीं मनोहर लाल में निहित हास्य-व्यंग्य की पकड़ का परिचय देते हुए विश्वास दिलाता है कि भविष्य में लेखक बेहतर रचनाएं साहित्य जगत् को दे सकता है। प्रसंग-वश, फ्लैप के ऊपर मनोहर लाल का जो कार्टून छपा हुआ है वह मनोहर लाल कम और कार्टून ज्यादा है। कार्टून के ठीक नीचे मुद्रित है — 'मलाल' सचमुच, यह मलाल ही है, मनोहर लाल नहीं ! हां आवरण—पृष्ठ की 'मुंडती भेड़' और 'भेड़ मूंडक' — दोनों प्रभावशाली हैं जिसके लिए श्री सुधीर तैलंग को बधाई दी जा सकती है।

श्री एम. एस. मुखर्जी, मुख्य सचिव हिमाचल प्रदेश सरकार, शिमला में तमिलनाड़ के कलाकारों की चित्र प्रदर्शनी का अवलोकन करते हुए।

शिमला में कला प्रदर्शनी

सोहन लाल

दिनांक 17 से 23 सितम्बर, 1991 तक हिमाचल कला, संस्कृति भाषा अकादमी, केन्द्रीय ललित कला अकादमी व राष्ट्रीय कला केन्द्र लखनऊ के संयुक्त तत्वावधान में शिमला में क्षेत्रीय कला प्रदर्शनी व बहुमाध्यम कैम्प का आयोजन किया गया।

सर्वप्रथम अकादमी के सचिव, डॉ० बंशीराम शर्मा ने केन्द्रीय ललित कला अकादमी नई दिल्ली, राष्ट्रीय ललित कला केन्द्र, लखनऊ तथा हिमाचल कला, संस्कृति और भाषा अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित बहुमाध्यम कैम्प व क्षेत्रीय कला प्रदर्शनी के मुख्य अतिथि, श्री राधा रमण शास्त्री, माननीय शिक्षा, भाषा-संस्कृति, मन्त्री महोदय व कला पारखी और कला प्रेमी श्री एम० एस० मुखर्जी, मुख्य सचिव, हि० प्र० सरकार तथा अन्य कला साधकों, कला प्रेमियों का हार्दिक अभिनन्दन किया। उन्होंने अकादमी द्वारा ललित कला के प्रोत्साहन के लिए संचालित योजनाओं के सम्बन्ध में जानकारी दी। उन्होंने कहा कि "गुरु शिष्य परम्परा" अकादमी की एक महत्वपूर्ण योजना है जिसके अन्तर्गत वर्तमान समय में प्रदेश के ख्याति प्राप्त चार गुरु आठ शिष्यों को प्रशिक्षण प्रदान कर रहे हैं। उनके अनुसार जब भी भाषा एवं संस्कृति विभाग द्वारा प्रदेश के कलाकारों की प्रदर्शनियां लगवायीं जाती हैं। कलाकारों को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से क्रय समिति की संस्तुति के आधार पर अकादमी द्वारा कलाकारों की उत्कृष्ट कलाकृतियां भी क्रय की जाती हैं।

द्वितीय क्षेत्रीय कला प्रदर्शनी के सम्बन्ध में बताते हुए राष्ट्रीय ललित कला केन्द्र, लखनऊ के मानद सचिव, श्री अखिलेष निगम,

जो कि स्वयं एक ख्यातिप्राप्त कलाकार हैं ने कहा कि "यह पहला अवसर है कि ललित कला केन्द्र, लखनऊ से बाहर कोई कार्यक्रम का आयोजित किया गया है इस बात पर विशेष रुप से चर्चा हुई कि केन्द्रीय ललित कला अकादमी देश के विभिन्न क्षेत्रों के कलाकारों को सम्मिलित करके उनकी कला को प्रोत्साहन दे। उन्होंने कहा कि अभी देश में चार कला केन्द्र कार्यरत हैं जो कि मद्रास, कलकत्ता, भुवनेश्वर व लखनऊ में स्थित हैं। इन कला केन्द्रों का उद्देश्य देश के कलाकारों को प्रोत्साहन देना है। लखनऊ कला केन्द्र के अन्तर्गत छः राज्यों व एक केन्द्र शासित प्रदेश को शामिल किया है जो हैं जम्मू काश्मीर, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, चण्डीगढ़ राजस्थान व उत्तर प्रदेश। इस प्रदर्शनी के लिए इन राज्यों के कलाकारों से प्रविष्टियां आमन्त्रित की गई थी परन्तु वर्तमान हालात की वजह से कुल 29 कलाकारों की कलाकृतियां ही सम्मिलित की जा सकीं हैं। उन्होंने कहा कि कलाकारों का सुझाव था कि इसके लिए कोई पुरस्कार रखा जाए परन्तु राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी के दौरान ही राष्ट्रीय पुरस्कारों के लिए कलाकृतियां का चयन किया जाता है। राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी में देश के समस्त कलाकारों को सम्मिलित नहीं किया जा सकता, इस दृष्टि से क्षेत्रीय कला प्रदर्शनी एक सफल प्रयास है जिसके माध्यम से कलाकार अपनी कलाकृतियों को समाज के समक्ष प्रदर्शित कर सके।

उन्होंने बताया कि ललित कला केन्द्र, लखनऊ की स्थापना सन् 1984 में हुई। इस केन्द्र का मुख्य उद्देश्य कला साधकों को सुविधाएं उपलब्ध कराना है विशेष रूप से ग्राफिक, मूर्तिकला, चित्रकला आदि में प्रशिक्षण देना है क्योंकि इनमें अत्यधिक तकनीक की आवश्यकता होती है। उन्होंने कहा कि हिमाचल में उन कलाकारों को जो कला के क्षेत्र में कार्य कर हैं छात्रवृत्तियों प्रदान की जाती हैं, इस तरह के कार्य के लिए कलाकारों को राष्ट्रीय ललित कला केन्द्र, लखनऊ में भेजें। इसके साथ ही उन्होंने यह निवेदन किया कि शिमला में एक कला भित्तिका की स्थापना की जाए क्योंकि इसके बनने से कला के प्रोत्साहन के लिए अत्यधिक सम्भावनाएं है।

प्रो० बी० पी० कम्बोज, सचिव ललित कला अकादमी ने अकादमी की योजनाओं के सम्बन्ध में जानकारी देते हुए कहा कि केन्द्रीय ललित कला अकादमी, नई दिल्ली एक ऐसी संस्था है जिसके ऊपर कला के विकास का दायित्व है जहां राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, अखिल भारतीय व अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों का आयोजन अकादमी का कार्य है वहां कलाकारों की कार्यशालाएं, कैम्पस, गोष्ठियां, विद्वानों के भाषण आदि कार्यक्रम अकादमी की देख-रेख में होता ही रहता है। उन्होंने कहा कि हरेक वर्ष अकादमी द्वारा राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी का आयोजन किया जाता है। इसके अलावा केन्द्रीय ललित कला अकादमी द्वारा त्रिवर्षीय अन्तर्राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी का आयोजन किया जाता है। उन्होंने बताया इस वर्ष यह प्रदर्शनी फरवरी माह में दिल्ली में अयोजित की जाएगी। उनके अनुसार ललित कला के क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं को कला के विकास के लिए विशेष समितियों की सिफारिश पर आर्थिक अनुदान भी दिया जाता है। इसके अलावा ललित कला अकादमी नई दिल्ली द्वारा ललित कला विधा से सम्बन्धित पुस्तकों का प्रकाशन किया जाता है। शोध कार्यों के लिए ऐसी परियोजनाओं को भी स्वीकार किया जाता है जो ललित कला के क्षेत्र से सम्बद्ध हो। इन्होंने हिमाचल प्रदेश को ललित कला अकादमी, नई दिल्ली के सहयोग के लिए विश्वास दिलाया।

श्री एम० एस० मुखर्जी, मुख्य सचिव, हि० प्र० सरकार ने कहा कि हिमाचल प्रदेश अपनी कला व संस्कृति के लिए प्रसिद्ध है। प्राचीन कला से ही हिमाचल लोकनृत्य, लोक गीतों व लोक कलाओं के लिए विख्यात रहा है। इसमें कोई दो राय नहीं कि हिमाचल कला व कलाकारों को संरक्षण न देता हो।

श्री राधा रमण शास्त्री, माननीय शिक्षा, भाषा-संस्कृति मंत्री महोदय ने इस बहु-माध्यम कैम्प व क्षेत्रीय कला प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए कहा कि उक्त आयोजन एक सराहनीय कार्य है। उन्होंने देश के विभिन्न क्षेत्रों से आए हुए कलाकारों का

अभिनन्दन किया। उन्होंने कहा कि जीवन में ललित कलाओं का अपना ही महत्व है। कलाओं के बिना जीवन शून्य है। कलाओं के बगैर जीवन निरा पाषाणमय होगा। कलाकार जीवन में कला को जीवमान रखते है, जो प्रेरणा के स्त्रोत हैं। कलाकार जीवन कुछ ऐसा भरता है जिससे सही मायनों में जीवन जिया जाता है। भावाभिव्यक्ति का कार्य जो कलाकार करते हैं वह प्रशंसा के पात्र हैं। हमारे देश में प्राचीन संस्कृति व्याप्त है। उन्होंने कहा कि जिस प्रकार छन्दमुक्त काव्य में भावाभिव्यक्ति नहीं होती उसी तरह आजकल आधुनिक कला को जानना भी दुर्लभ है। कला का स्तर कहीं घट तो नहीं गया है इस विषय को कला विचारक राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा करें। जब तक कला में आकर्षण रहता है तभी उसकी अभिव्यक्ति सम्भव है। वर्तमान काल में मनुष्य कला के विषय में चिन्तन करना ही नहीं चाहता, कुछ ऐसी स्थिति है। उन्होंने कहा कि जब हमारी सीमाएं सुरक्षित होंगी, हम शास्त्र के बारे में चिन्तन कर सकते हैं। परन्तु आजकल इस दयनीय स्थिति में भी कला पनप रही है।

अन्त में श्री सी० आर० बी० ललित ने मुख्य अतिथि महोदय, अन्य उपस्थित महानुभावों, कला प्रेमियों का धन्यवाद किया।

●

अकादमी की साहित्यिक तथा सांस्कृतिक दैंनन्दिनी

नवम्बर, 1990 से जनवरी, 1991 तक

1 नवम्बर, 1990 पहाड़ी भाषा दिवस समारोह

गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी अकादमी द्वारा राज्य स्तरीय पहाड़ी दिवस समरोह का आयोजन किया गया इस वर्ष यह समारोह जिला सिरमौर रेणुका में रेणुका मेले के दौरान किया गय।। दो सत्रों में सम्पन्न हुए इस समारोह के पहले सत्र

में दिनांक 1 नवम्बर, 1990 को प्रातः 11.00 बजे लेखक गोष्ठी आयोजित हुई जिसमें श्री विद्यानन्द सरैक ने "शिमला, सोलन, सिरमौर, क्षेत्रों के पारम्परिक संगीत वाद्य यन्त्र तथा तालें एक विवेचन" विषय पर शोधात्मक लेख पढ़ा तथा पहाड़ी भाषा शास्त्रीय अध्ययन एक सर्वेक्षण विषय पर खुली चर्चा भी की गई जिसमें प्रदेश भर के लगभग 20 साहित्यकारों ने भाग लिया उसी दिन सायं 6.30 बजे पहाड़ी कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया।

25 अक्तूबर से 1 नवम्बर, 1990 शिल्पियों की कार्यशाला

दिल्ली में अयोजित किये जाने वाले व्यापार मेले के सम्बन्ध में हिमाचल कला, संस्कृति और भाषा अकादमी तथा भाषा एवं संस्कृति विभाग के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 25 अक्तूबर से 1 नवम्बर, 1990 तक हिमाचल राज्य संग्रहालय में हिमाचल के शिल्पियों की एक कार्यशाला का आयोजन किया गया। इसमें प्रदेश के 7 शिल्पियों ने भाग लिया। कार्यशाला के दौरान लकड़ी के मुखौटों तथा कलाकृतियों का निर्माण किया गया। बुनकर द्वारा खड्डी पर किन्नौरी शिल्प में मफलर तैयार किया गया। इस दौरान महिला शिल्पियों द्वारा गुड़ियाँ तैयार की गई। एक किन्नौरी शिल्पी द्वारा प्राचीन वाद्ययन्त्र जिसे किन्नौरी बोली में "द्वितारी" कहा जाता है भी बनाई गई। इस कार्यशाला में तैयार की गई कलाकृतियों को बाद में दिल्ली में व्यापार मेले में प्रदर्शित करने हेतु भेजा गया। व्यापार मेले में पहाड़ी चित्र-कला के प्रसिद्ध चित्रकार श्री ओम सुजानपुरी तथा दो अन्य लकड़ी के शिल्पियों ने निरूपण हेतु भाग लिया।

17 दिसम्बर से 25 दिसम्बर, 1990

कलालार शिविर तथा प्रदर्शनी का आयोजन

केन्द्रीय ललित कला अकादमी दिल्ली, राष्ट्रीय ललित कला केन्द्र लखनऊ तथा हिमाचल कला, संस्कृति और भाषा अकादमी शिमला द्वारा संयुक्त रूप से स्थानीय वाई. डब्ल्यू. सी. ए. हॉल में प्रथम बार बहुमाध्यम कलाकार शिविर तथा उत्तरी क्षेत्र कला प्रदर्शनी का आयोजन किया गया।

बहुमाध्यम शिविर में "प्रदेश के 5 तथा प्रदेश के बाहर से 9 कलाकारों ने भाग लिया। शिविर के दौरान कलाकारों द्वारा ग्राफिक्स, रेखाचित्र तथा तैलचित्र तैयार किए गए। प्रदर्शनी में उत्तरी भारत के सुपरिचित 29 कलाकारों की कृतियां प्रदर्शित की गई थीं जिनमें 25 विभिन्न माध्यमों तथा तैलचित्र व जलरंगों, पेंसिल तथा स्याही में बने भूदृश्य (प्रिंट) ड्राईंग कम्पोजिशन तथा अमूर्त कृतियां और धातु लकड़ी व पत्थर की बनी प्रतिमाएं प्रदर्शित की गई।

इस प्रदर्शनी व शिविर का उद्घाटन प्रदेश के शिक्षा एवं संस्कृति मंत्री तथा विद्वान व कलाप्रेमी श्री राधारमण शास्त्री ने किया। समापन प्रदेश उच्च न्यायलय के मुख्य न्यायाधीश जस्टिस पी. सी. बालकृष्ण मैनन ने किया। इस अवसर पर प्रदेश के कला-कारों, कलाप्रेमियों के अतिरिक्त मुख्य सचिव श्री एम. एस. मुखर्जी, केन्द्रीय ललित कला अकादमी के उपाध्यक्ष श्री आनन्द देव, सचिव वी. पी. कम्बोज, उप-सचिव श्री हरीश श्री वास्तव, राष्ट्रीय ललित कला केन्द्र लखनऊ के क्षेत्रीय सचिव श्री अविनाश निगम, भाषा संस्कृति विभाग हिमाचल प्रदेश के निदेशक श्री सी. आर. बी. ललित व हिमाचल अकादमी के सचिव डॉ० बी. आर. शर्मा उपस्थित थे।

28 जनवरी, 1991 को प्रदेश के भाषायी एवं सांस्कृतिक सर्वेक्षण के कार्य योजना के अन्तर्गत दिनांक 29 जनवरी, 1991 को सिरमौर जिले में कार्यरत सर्वेक्षकों की संगोष्ठी नाहन के किसान भवन हाल में आयोजित की गई। इस प्रकार की संगोष्ठियों का आयोजन करके सर्वेक्षकों के कार्य में आने वाली कठिनाईयों का निराकरण करके उन्हें मार्गदर्शन भी दिया जाता है।

संगोष्ठी का प्रारम्भ करते हुए सिरमौर के जिला भाषा अधि-कारी श्री सीताराम आजाद ने सिरमौर जिला को समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और उसकी महत्ता के विषय बताते हुए लोक संस्कृति और देवी देवताओं पर कार्य करने की आवश्यकता पर बल दिया। सचिव अकादमी ने इस अवसर पर सर्वेक्षकों से उनके सर्वेक्षण कार्य के साथ-साथ लोगों में फैले अन्ध विश्वास को दूर करने का आग्रह

किया ताकि छिपी पड़ी संस्कृति को सामने लाकर उस पर वैज्ञानिक दृष्टि से कार्य किया जा सके।

31 जनवरी, 1991 थोक खरीद समिति की बैठक

अकादमी की थोक खरीद योजना के अन्तर्गत थोक खरीद समिति की बैठक दिनांक 31 जनवरी, 1991 को सचिव एवं आयुक्त (भाषा-संस्कृति) की अध्यक्षता में उनके सचिवालय कक्ष में सम्पन्न हुई। जिसमें वर्ष 1990 के लिए खरीद हेतु 110 पुस्तकें विचारार्थ रखी गई थीं।

●

Publications of Himachal Academy

1. **Distant Echoes—(Short Stories)** **40-00**
2. **A Dictionary of Pahari Dialects**
   &
   A Dictionary and Grammar of Kinawari **50-00**
3. **A Descriptive Grammar and Vocabulary of Chinali** **35-00**
4. **A Descriptive Bibliography of Himachal** **100-00**

सोमसी/100

15.	प्रो० मैथिली प्रसाद भारद्वाज	सदस्य
16.	श्री भगतराम मुसाफिर	,,
17.	श्री बलदेव सिंह ठाकुर	,,
18.	श्री विद्यासागर नेगी	,,
19.	श्री एम. आर. ठाकुर	,,
20.	डॉ० हरि राम जसटा	,,
21.	डॉ० खुशी राम गौतम	,,
22.	श्री जयदेव किरण	,,
23.	डॉ० मनोहर लाल	,,
24.	श्री टशी पलजोर	,,
25.	डॉ० वेद प्रकाश अग्नि	,,
26.	डॉ० पद्म चन्द्र कश्यप	,,
27.	डॉ० सुशील कुमार फुल्ल	,,
28.	श्री काहन सिंह जमाल	,,
29.	प्रो० केशव शर्मा	,,
30.	श्री अशोक चक्रधर	,,
31.	श्री शिवशरण सिंह ठाकुर	,,
32.	श्री विद्यानन्द सरैक	,,
33.	पद्मश्री माधवी मुदगिल	,,
34.	श्री चन्द्र लाल रैणा	,,
35.	प्रो० सनत कुमार चैटर्जी	,,
36.	श्री राम सुतार	,,

tharahkardu.in

HAACL पंजीकरण संख्या-आर.एन. 28271/75

भूण्डा में रस्से पर फिसलने के लिए प्रयुक्त सीट

भारतेन्दु प्रिंटिंग प्रैस • लोअर बाज़ार शिमला • दूरभाष 3452